भारत सरकार
GOVERNMENT OF INDIA
राष्ट्रीय पुस्तकालय, कलकत्ता ।
NATIONAL LIBRARY, CALCUTTA.

वर्ग संख्या H
Class No. 891·432
पुस्तक संख्या
Book No. P 8233

रा० पु०/N. L. 38.
H7/Dte/NL/Cal/79—2,50,000—1-3-82—GIPG.

53744

रा० पु०-44
N. L.-44

भारत सरकार
GOVERNMENT OF INDIA
राष्ट्रीय पुस्तकालय
NATIONAL LIBRARY
कलकत्ता
CALCUTTA

अंतिम अंकित दिनांक वाले दिन यह पुस्तक पुस्तकालय से ली गई थी । दो सप्ताह से अधिक समय तक पुस्तक रखने पर प्रतिदिन 6 पैसे की दर से विलम्ब शुल्क लिया जायगा ।

This book was taken from the Library on the date last stamped. A late fee of 6 P. will be charged for each day the book is kept beyond two weeks.

प्रभासमु सन्त/MGIP (FU) Sant.—118 NL/89—(1018-F-89/11-9-89)
—20-2-90—10,000.

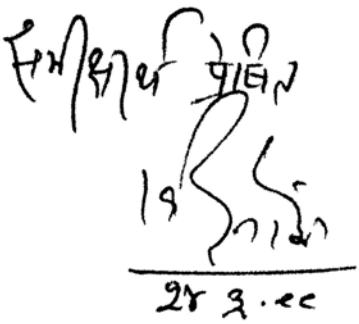

सागर तरंग–४

कर्फ्यू सख्त कर्फ्यू

बलवीर पाठक
एम० ए०

सागर तरङ्ग प्रकाशन
२६ ए, गांधीनगर, मुरादाबाद - २४४००१

प्रकाशक–
अशोक विश्नोई
सागर तरंग प्रकाशन
२६ ए, गांधी नगर
मुरादाबाद–२४४००१
फोन : २६२०५

National Library, Calcutta.
Delivery of Books Act, 1954

11 APR 1988

H
891.432
P 8233

मुद्रण–
दुर्गा प्रिन्टिंग प्रेस
२६ ए, गांधी नगर
मुरादाबाद–२४४००१

NATIONAL LIBRARY
53944
12.4.88

प्रथम संस्करण
दिसम्बर, १६८७

सर्वाधिकार प्रकाशक अधीन सुरक्षित

उप-शिक्षा निदेशक, [illegible] मण्डल–उ. प्र.,
श्री महेशचन्द्र पंत द्वारा विमोचित

मूल्य :
रु० २५/-

KARFUE SAKHT KARFUE
BALBIR PATHAK
M. A.
SAGAR TARANG PRAKASHAN
29-A, GANDHI NAGAR
M O R A D A B A D-244001

समर्पित

उन सभी.....

बेगुनाह इन्सानों को

जिनका

साम्प्रदायिक दंगों में

नाहक

खून बहा

—बलवीर पाठक

इस पुस्तक में जो कुछ भी है

१-	मेरी बात	लेखक के विचार•
२-	दो शब्द	प्रकाशक के उद्‌गार
३-	भूमिका	डा० कमल वशिष्ठ
४-	अपने विचार	साहित्यकार व नाटककारो द्वारा
५-	कर्फ्यू मख्त कर्फ्यू	एकाकी नाटक
६-	भारत महान उर्फ "आईना"	एकाकी नाटक
७-	जिओ और जीने दो	मोनो प्ले
८-	एक खून	एकाकी नाटक

बतकही

सामाजिक सत्य जो नाटक लगने लगता है और नाटक जो सत्य बोलने लगता है। 'कर्फ्यू सख्त कर्फ्यू' वह सत्य है, जो नाटक के माध्यम से उजागर होता है।

कलाकार के हृदय में आँख होती है इसलिए आंख वाले अन्धों को हृदय की आँख से जो कुछ वह देखता है- सहभागी बनकर दिखा देता है—यदि सहृदय-सहदृष्टि हुई तो भरत के शब्दों में लोकानुरंजन के साथ-लोक-शिक्षण होता है। अन्यथा मात्र नाटक है। बन्द आँख से देखा नाटक।

अनुभव आदमी को तपाकर लौह में ढाल देता है। वह लोहा साँचा बनता है, और साँचा अपने जैसे गढ़ता है। मुरादाबाद के रंगमंच में साँचे का काम किया भाई बलवीर पाठक जी ने। कई अनगढ़-गढ़े उन्होंने नाट्य प्रशिक्षण के माध्यम से, रंग शिविरों के दौरान।

ठोस का निखरा रूप सूक्ष्म है। ठोस अनुभव कुछ देता है—कर्फ्यू सरूत कर्फ्यू मे उस भोगे हुए ठोस अनुभवों को सूक्ष्म-रूप से पिरोकर जोड़ा है। बुद्धि भावना में कौन श्रेष्ठ है-यह लड़ाई नाटक में बर्तोल्ड ब्रेश्ट एवं भारतीय रंग दृष्टाओं में है। किन्तु 'रस' का आश्रय बुद्धि नहीं भावना है। भाई चारे की भावना, देश, राष्ट्र, परिवार की भावना मनुष्य को त्यागी बनाती है।

आज की आपा-धापी में व्यक्ति स्वयं के बारे में सोचता है, श्रेय का भागीदार बनना चाहता है—प्रेय को भुलाकर भावना शून्य-मात्र अहं ग्रस्त। इस स्वार्थी-संस्कृति में अपने सुहृदजनों को याद कर अपने कार्य का श्रेय देना सच्चे कलाकार का सहज गुण है। वह अपनी झोली में बटोरता है—अपने साथियों की सहृदयता।

विद्यालयों में राष्ट्रीय एकता, भाई-चारे की भावना का विकास आवश्यक है। तीनों लघुनाटक इन भावनाओं से ओत-प्रोत हैं। बच्चों में भावना का विकास हो—यह नाटकों द्वारा ही सम्भव है।

'कर्फ्यू सरूत कर्फ्यू' मुरादाबाद में साम्प्रदायिक दंगों में मानवीय मूल्यों की आँख देखी घटनाओं का जीवन्त दस्तावेज है। और दस्तावेज हैं पाठक जी की रंग चेतना, रंग दृष्टि, रंगानुभवो के दोहन का।

बाबल हाउस, शिन्दे की छावनी,
ग्वालियर (म० प्र०)

डा० कमल वशिष्ठ
नाटककार महासचिव "नाटायन"

नाटक-नाटककार

न्यू अल्फ्रेड कम्पनी और मून लाईट थियेटर से ५० वर्षों तक जुड़े रहने के बाद जब १९६७ में मैं पारसी रंगमंच से रूख्सत हुआ तो मैं महसूस कर रहा था—

जिंदगी तुझसे बहुत काम लिया है मैंने।
अब यकीनन तुझे आराम की ख्वाईश होगी ।।

मैं पूरी तरह आराम कर भी न पाया था कि सन १९७५ में मेरी मुलाकात 'आदर्श कला संगम' के निर्देशक श्री बलवीर पाठक से हुई जिन्होंने एक कार्यक्रम में संस्था की ओर से मुझे सम्मानित करने के लिये निमन्त्रित किया। आदर्श कला संगम के उस सुनियोजित कार्यक्रम से मैं इतना प्रभावित हुआ कि फिर जब मुझे संस्था का संरक्षक बनने का दावतनामा मिला तो मैंने बेहिचक उसे स्वीकार कर लिया।

धीरे-धीरे मैं संस्था की मार्फत श्री बलवीर पाठक के करीब आता चला गया और मैंने पाया कि वह जाति तौर पर एक निहायत ही मेहनतकश और अनुशासित इन्सान हैं। जो कि एक सफल रंगकर्मी और निर्देशक होने के लिये पहली शर्त है। लगभग नौ वर्षों तक मैं उन्हें एक रंगकर्मी और निर्देशक ही समझता रहा लेकिन सन १९८४ में जब उनका एकांकी नाटक 'कर्फ्यू सख्त कर्फ्यू' आकाशवाणी रामपुर की नाट्य-लेखन प्रतियोगिता में प्रथम आया तब मुझे पहली मर्तबा यह इल्म हुआ कि श्री बलवीर पाठक के अन्दर एक जबरदस्त लेखक भी छुपा बैठा है। रेडियो राष्ट्रीय नाट्य-समारोह में आकाशवाणी से इस नाटक की प्रस्तुति पर रेडियो

श्रोताओं की बेहद जबरदस्त प्रतिक्रिया हुई और उनके ढेर सारे खत इस नाटक की प्रशंसा में आये। तब मैं रामपुर रेडियो सलाहकार समिति का एक सदस्य था और मुझे इस पर बहुत फ़ख्र महसूस हुआ। इसके बाद मुझे मुक्तलिफ जगहों पर ६-७ बार यह नाटक देखने को मिला। हर बार उसके संवादो ने मेरे हृदय को छुआ है और में अन्य दर्शकों के साथ आँसुओं से रोया हूँ। श्री बलवीर पाठक की दूसरी तरनीफ 'आईना' नागरिक सुरक्षा द्वारा आयोजित राष्ट्रीय एकता सप्ताह के अन्तर्गत मुझे देखने को मिली। इस नाटक को जिला मुरादाबाद के S. S. P. श्री S. K. Chandra ने प्रशंसा करते हुए कहा था कि इसकी एक नही अनेक प्रस्तुतियाँ जिले के अलग-अलग भागों में होनी चाहिये जिससे नागरिकों में राष्ट्रीय अखण्डता के प्रति चेतना जागे। इन नाटकों को नेहरू युवा केन्द्र द्वारा आयोजित 'युवा सप्ताह' में भी श्री बलवीर पाठक ने प्रस्तुत किया था जहाँ पर नगर के सांसद जनाब हाफिज मुहम्मद सिद्दीक एवं जिलाधीश श्री आर० चन्द्रा ने उनकी सशक्त प्रस्तुतियो से प्रभावित होकर नाटको की भूरि-भूरि प्रशसा की थी। इस पुस्तक में संकलित सभी नाटक साम्प्रदायिक सद्भावना और राष्ट्रीय एकता की ज्योति जन-जन के मन में जलाने मे सफल होगे ऐसा मेरा विश्वास है।

कटार शहीद,
मुरादाबाद

—फिदा हुसैन 'नरसी'

उपस्थापन

'कर्फ्यू सख्त कर्फ्यू' नाट्य-कृतियों का ऐसा संकलन है, जिसका रचनाकार अपने मूल-स्वभाव से रंगकर्मी है। इनके लेखक श्री बलवीर पाठक जब नाटक और रंगमंच की प्रकृति और महिमा के प्रति सचेत भी नहीं हो पाये थे, तभी से रंगकर्म से सक्रिय रूप से जुड़ गये थे। आरम्भिक किशोरावस्था में ही घटित होने वाला यह जुड़ाव फिर कभी क्षीण नहीं हुआ और श्री पाठक की जीवन-प्रवृत्ति बन गया। श्री पाठक का रंग कर्म प्रारम्भ तो अभिनय से ही हुआ किन्तु शीघ्र ही उनकी रुचि रंगकर्म के हर पक्ष तक फैल गयी, जिसका स्वाभाविक परिणाम यह होना ही था कि उन्हें नाट्य-निर्देशन का दायित्व और अधिकार अपेक्षाकृत अल्पवय में ही प्राप्त हो गया। मेरा अनुमान है कि श्री बलवीर पाठक ने अपने जीवन में जितना अभिनय किया होगा उससे अधिक उन्होंने नाटकों का निर्देशन किया है। अपने निर्देशन में उन्होंने अनेक नये कलाकारों को प्रशिक्षण देकर अपने क्षेत्र की नाट्य-प्रवृत्तियों को विकसित और समृद्ध बनाने में अपूर्व योगदान किया है।

उनके निर्देशन में दिल्ली के लालकिले के सामने परेड ग्राउंड में, जिसका नया नाम अब सुभाष मैदान है साधारण रामलीला से भिन्न राम कथा का विजयादशमी के अवसर पर निरन्तर दस दिवसों तक चलने वाला भव्य मंचन पिछले इक्कीस वर्षों से आयोजित होता चला आ रहा है। जिसकी प्रशंसा न केवल भारतीय कला-मर्मज्ञों ने हर वर्ष की है, बल्कि संसार के प्रायः सभी दूसरे देशों के पर्यटकों, राजनेताओं तथा कला-विशेषज्ञों का एक बड़ा समूह भी उसे हर वर्ष देखता रहा है और उससे गहराई से प्रभावित होता रहा है। इस प्रकार श्री पाठक के निर्देशन में होने वाले राम कथा के इस मंचन की

ख्याति राष्ट्र की परिधि को पार कर अब अन्तर्राष्ट्रीय सीमाओं को स्पर्श कर रही है।

हर विवेकवान नाट्य-निर्देशक को नाटक के लेखन पक्ष में रुचि लेनी ही पड़ती है। किसी अन्य लेखक की नाट्य-कृति को भी जब वह मंचन के लिये चुनता है तो उसे किसी न किसी रूप में अवसर की अपेक्षा और उपलब्ध साधन-सुविधाओं की दृष्टि से नाटक के मूल पाठ में थोड़ा-बहुत परिवर्तन करना ही पड़ता है। श्री पाठक के नाट्य-लेखन का आरम्भ नाट्य-कृतियों म अपेक्षित इसी प्रकार के परिवर्तनों और संशोधनों से हुआ। पर शीघ्र ही उनके सामने विशिष्ट अवसरों के उपयुक्त नाट्य-कृतियों के चयन का प्रश्न आया और कोई उपयुक्त पूर्व लिखित नाटक उपलब्ध न होने पर उन्होंने अपनी नाट्य-प्रतिभा का प्रयोग अपनी आवश्यकता के अनुरुप नाट्य-रचनाओं के लेखन मे भी करना प्रारम्भ कर दिया, जिसके आधार पर उनके रंग-कर्म में नाट्य-लेखन का आयाम भी जुड़ गया।

भारतवर्ष के प्राचीन साहित्य में नाटक के लिये 'रूपक' शब्द का प्रयोग किया जाता था, नाटक जिसका एक भेद मात्र था। रूपक भी काव्य का एक भेद था जिसे दृश्य काव्य कहकर संकेतित किया जाता था। किन्तु जीवन की नई परिस्थितियों और किसी सीमा तक पाश्चात्य प्रभाव ने लेखन-विधाओं में नाटक को काव्य से सर्वथा स्वतंत्र और निजी रूप दे दिया है, जो अपने आप में अत्यन्त विशिष्ट और प्रभावशाली है। नाटक अपने मौलिक रूप में पाठ्य-रचना नहीं होता, मंचन के अभिनय, रूप-सज्जा, ध्वनि-प्रभाव तथा प्रकाश-संयोजन आदि अन्य दूसरे प्रयोगों से जुड़कर ही उसका सम्पूर्ण रूप परिस्फुट रूप मे दर्शकों के सामने आता है। इसीलिये नाटक के लेखन-पक्ष का रंग मंच की अपेक्षाओं से सुपुष्ट रूप से जुड़ा होना परम आवश्यक संज्ञा है। हिन्दी में नाट्य-लेखन भारतेन्दु हरिश्चन्द्र द्वारा रंगमंच की व्यवहारिक अपेक्षाओं से जुड़कर ही प्रारम्भ किया गया किन्तु धीरे-धीरे रंगमंच से उसका जुड़ाव प्रायः टूट गया। अब इधर कुछ दिनों से हिन्दी में भी नाट्य-मंचन अपनी

विशिष्ट पहचान बनाने लगा है और इस कारण रंगमंच से जुड़ा हुआ नाट्य-लेखन भी हमारे सामने आने लगा है। प्रस्तुत नाट्य-संकलन भी हिन्दी के रंगमंच से जुड़े हुए नाट्य-लेखन की एक विशिष्ट कड़ी है, जो लघुकाय होने पर भी मेरे विचार से एक महत्वपूर्ण रचना-संकलन है और जिसके पीछे रंग मंच की व्यावहारिक आवश्यकताओं के व्यापक परिज्ञान की शक्ति तो है ही, कला के सांस्कृतिक उद्देश्य में गहन निष्ठा की प्रेरणा भी हमें सक्रिय दिखाई देती है।

इस संकलन में 'मेरी बात' शीर्षक से लेखक ने अपनी ओर से जो संक्षिप्त निवेदन प्रस्तुत किया है उसमें उसने स्पष्ट रूप से लिखा है कि "पता नहीं क्यों मैं नाटकों को मनोरंजन का साधन मात्र नहीं मानता बल्कि समाज के समस्त क्षेत्रों को आन्दोलित करने का सशक्त माध्यम मानता रहा हूँ। मेरी यह भी मान्यता रही है कि नाटक में वह सब कुछ होना चाहिये जो दर्शक को रंग मंच और नाटक से बाँधे रख सके और दर्शक के मन में इतनी गहराई तक चोट करे कि वह कुछ सोचने पर विवश हो जाये।" लेखक का यह कथन उसकी नाट्य-दृष्टि को पूर्णतया स्पष्ट कर देता है। इस कथन से श्री पाठक की कला के सांस्कृतिक स्वरुप में निष्ठा का स्पष्ट परिचय हमें प्राप्त होता है। श्री पाठक ने लिखा है कि वे नाटकों को मनोरंजन का साधन मात्र क्यों नहीं मानते, इसका उन्हें पता नहीं है। हर कला-विचारक यह जानता है कि किसी कला का मूल उद्देश्य मनोरंजन मात्र नहीं होता। सांस्कृतिक सत्य का उदघाटन ही हर कला-प्रयास का प्रकृत लक्ष्य होता है। मनोरंजन-शब्द का प्रयोग कलाएँ साधन के रूप में ही किया करती है। हिन्दी की सर्वश्रेष्ठ कवियित्री श्रीमती महादेवी वर्मा ने यह घोषणा की है कि 'सत्य काव्य का साध्य और सौन्दर्य साधन है। मनोरंजन सौन्दर्य-विधान से ही सिद्ध होता है और कला के क्षेत्र में उसकी सही स्थिति साधन की ही हो सकती है। मनोरंजन जब कला का मूल लक्ष्य बन जाता है तो कला कला न रहकर व्यवसाय बन जाती है और अपने लक्ष्य से भ्रष्ट हो जाती है। इस

संकलन के नाटकों की सोद्देश्यता और सामाजिक सार्थकता ही मेरे विचार से श्री पाठक के रचना-कर्म की सर्वाधिक सराहनीय विशेषता है।

इस संकलन के चारों नाटक सन्देश-प्रधान हैं, जिन्हें चाहें तो विचार-प्रधान भी कह सकते हैं। वैचारिकता आधुनिकता की शर्त है। पर साथ ही यह भी सत्य है कि विचार कला में भावना के साथ संयुक्त होकर प्रकट होते है। इन नाटकों में सदेश अथवा विचार शास्त्रीय उपदेश के रूप में हमारे सम्मुख न आकर मनोरागों के रूप में अभिव्यक्त होते है। इन नाट्य-रचनाओं में यदि हम नायक की खोज करने चलें तो नायकत्व के पूर्वप्रचलित प्रतिमानों के आधार पर इन नाटकों के किसी पात्र को नायक होने की मान्यता प्रदान नही की जा सकती। इन नाटकों में नायक का स्थान उस विचार या संदेश को ही दिया जा सकता है जिसकी स्थापना एवं अभिव्यंजना के लिये इन नाटक की रचना की गयी है। पर इसके साथ ही प्रशंसनीय बात यह है कि इन नाटकों के पात्र पूरी तरह भावनाशील एवं सजीव है और मंच पर अपनी उपस्थिति से हमें प्रभावित करने की सामर्थ्य रखते हैं। इस संकलन की तीसरी रचना 'भारत महान् उर्फ आईना' प्रतीकात्मक रचना है जिसकी केन्द्रीय पात्र 'स्त्री' भारत माता का प्रतीक है किन्तु इस प्रतीकात्मक रचना के पात्रों को भी वैयक्तिक सजीवता से सम्पन्न बनाने में लेखक सफल हुआ है।

जहाँ तक इन नाटकों के मचोपयोगी होने का प्रश्न है, वह रंगमंच के लिये ही एक रगकर्मी द्वारा लिखे गये है और प्रकाशित होने से पूर्व आकाश-वाणी से प्रसारित तथा मंच पर अनेक बार पूरी सफलता से अभिनीत किये जा चुके हैं। मंचन की दृष्टि से ये नाटक बहुत सरल भी है क्योंकि यह किसी जटिल मंचोय-व्यवस्था की अपेक्षा नही रखते। थोड़े साधनों और थोड़े अनुभव वाला कोई नाट्य-दल भी इन्हे सुविधापूर्वक मंचित कर सकता है।

इन नाटकों में निहित विचार और सदेश राष्ट्र की वर्तमान अपेक्षाओं को रेखांकित करते है और इन रचनाओं की सामाजिक तथा राष्ट्रीय सार्थकता को सिद्ध करते हैं—अपने इन शब्दों के साथ मै इस संकलन की रचनाओं को उपस्थापित कर रहा हूँ और इस सम्बन्ध में आशावान हूँ कि श्री बलवीर पाठक का रंगकर्म अपने लेखकीय आयाम को भी समुचित महत्व प्रदान करता रहेगा।

हरगुलाल बिल्डिंग,
कटरा नाज, मुरादाबाद

प्रो० महेन्द्र प्रताप

यदि राष्ट्र नहीं तो.....?

"कर्फ्यू सख्त कर्फ्यू" श्री बलवीर पाठक द्वारा लिखित एक ऐसा नाटक है जो परिस्थियों की वास्तविकता को उजागर करता है कि किस प्रकार लोग भ्रान्तियों का शिकार होकर अपनों पर ही शंका और अविश्वास कर अपने लिए संकट मोल ले लेते हैं और जब तक आँख खुलती है सब कुछ लुटा बैठते है।

एक और नाटक "आईना" जो इस पुस्तक में है वह समय रहते आदमी को सँभल जाने की चेतावनी देता है और पंडित जवाहर लाल नेहरू के इस अमर वाक्य की सत्यता प्रकट करता है कि 'यदि राष्ट्र नही तो हम कहाँ रहेंगे'।

श्री बलवीर पाठक द्वारा लिखित उपरोक्त नाटकों को मैंने नेहरू युवा केन्द्र, मुरादाबाद में इसके स्थापना दिवस अर्थात १४ नवम्बर १९८६ और राष्ट्रीय युवा सप्ताह अर्थात् १२ से १९ जनवरी, १९८७ तक के समारोह में मंचित कराया। इसके पश्चात् राष्ट्रीय कौमी सप्ताह के शुभारम्भ स्व० श्रीमती इन्द्रिरा गाँधी के जन्म दिवस दिनाँक १९ नवम्बर, १९८७ को चाचा नेहरू बाल मन्दिर उ० मा० विद्यालय, आँवला (बरेली) में बच्चों से कराया तो प्रत्येक दर्शक ने भूरि-भूरि प्रशंसा की और उ० प्र० के मंत्री माननीय श्री चेतराम गंगवार, मुरादाबाद के सांसद माननीय हाफिज मौहम्मद सिद्दीक, विधायक एवं इफको के निदेशक चौ० समर पाल सिंह, मुरादाबाद के

जिलाधिकारी श्री आर चन्द्रा, कार्यकारी निदेशक, इफको उर्वरक परियोजना आँवला (बरेली) श्री एस० आर० सिहोर, ने अपने-अपने सम्बोधनों मे विशेष उल्लेख कर प्रशंसा की।

इस पुस्तक मे सकलित तीनो एकाकी व मोनोप्ले समाज को एक नई दिशा देगे ऐसा मेरा विश्वास है।

शुभकाम्नाओ सहित !

नेहरू युवा केन्द्र
ए-८३, लाजपत नगर,
मुरादाबाद-२४४००१

रामरक्षपाल शर्मा
युवा समन्वयक

परिचय

आज अनायास ही मुझे १९४८ की वह शाम याद आ रही है जब विभिन्न कालिजों के कुछ किशोर छात्र मेरे पास आये और मुझ से अनुरोध किया कि उस वर्ष देश के बटवारे को लेकर हुए साम्प्रदायिक दंगों से पीड़ित सैकड़ों असहाय, बेघर लोगों की सहायता हेतु चन्दा जुटाने के लिए उनके द्वारा मंचित होने वाले नाटक का निर्देशन करूँ ! उन ही छात्रों में एक दुबला पतला सा किशोर भी था, जिस के चेहरे से अभिनय प्रतिभा शेष किशोरों से अलग थलग व्यक्त हो रही थी और इसी किशोर ने अपना परिचय मुझे "बलवीर पाठक" कह कर दिया !

नाटक सफलता पूर्वक मंचित हुआ, बलवीर पाठक ने अपनी अभिनय छाप दर्शकों के दिलोदिमाग पर अंकित कर दी ! और यह छाप अन्ततः अमिट बन कर रह गई।

वर्ष दर वर्ष प्रतिभा की सीढियाँ लांघते हुए बलबीर आज जहाँ पहुँच गया है वह उन्नत शिखर ही कहा जा सकता है ! उसके द्वारा लिखित एकांकी "कफ़्यू सख़्त कफ़्यू" १४० नाटकों में से प्रथम श्रेणी का नाटक आकाशवाणी द्वारा नाटय लेखन प्रतियोगिता में माना गया, जो उसकी उन्नत प्रतिभा का ही परिचायक है।

"अल्लाह करे यह ज़ोरे कलम और ज़ियादा"

इसी शुभकामना के साथ,

ब्रज भवन, लाइनपार,
मुरादाबाद (उ० प्र०)

कामेश्वर सिंह

शुभकामनाओं के साथ–

मुझे यह जानकर हर्ष हुआ कि श्री बलवीर पाठक ने अपने नाटकों का पुस्तक रूप दिया है। मैं इन नाटकों में से कुछ को रेडियो के माध्यम से परख चुका हूँ और इनका प्रसारण–प्रक्षेपण का परिचय पा चुका हूं। पूरी आशा है कि श्री पाठक जी के इस सद्प्रयास का लाभ अन्य रंगकर्मी उठायेंगे।

आकाशवाणी,
चण्डीगढ़ (हरियाणा)

प्रकाश चन्द्र जोशी
केन्द्र निदेशक

मेरी बात

मेरी समझ में नहीं आ रहा है कि मैं अपनी बात कहाँ से शुरू करूँ। क्या अपने स्वर्गीय पिता श्री से जिन्होंने मेरा नाट्य प्रेम देख, मेरी नवविवाहिता पत्नी उर्मिला को सन् १९५२ में अभिनय करने की स्वीकृति दे मुझे प्रथम महिला नाट्य कलाकार का पति होने का गौरव प्रदान किया या अपने जयेष्ठ भ्राता स्व० महावीर पाठक से, जिन्होंने पिताश्री की मृत्यु के ठीक दूसरे दिन पूर्व निश्चित नाटक में भाग लेने की आज्ञा प्रदान कर मुझे प्रोत्साहित किया। या फिर अपनी जीवन संगिनी को ही अपनी बात का मुद्दा बनाऊँ जिसने मेरे नाट्य-समर्पण के कारण रातें जाग-जाग कर काटीं, मेरे लौट आने तक भूखी बैठी रहीं और इस तरह मेरी प्रेरणा बनी रही।

किन्तु इस सब के पीछे थे मेरे प्रथम गुरु स्व० श्री रामसिंह चित्रकार और द्वितीय गुरु श्री कामेश्वरसिंह। कुछ लिखने की हिम्मत तो सिंह साहब को देख कर ही हुई, जिन्होंने कई एकांकी मुझ से लिखवाये, कई नाटकों में स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन करवाये। वह बोलते जाते थे, मैं लिखता जाता था।

धीरे धीरे मुझे लगा कि यह काम तो मैं भी कर सकता हूँ और तभी मैंने भी कलम उठाई। नाटक करने या दूसरों से करवाने से पहले मैं पढ़ता; उसमें संशोधन करता और फिर करता उन्हें मंचित। इस तरह मुझे नाटक पढ़ने का शौक लग गया। मैंने कुछ लब्ध पारसी नाटक पढ़े। जिनमें से 'सती 'वैश्या व 'परिवर्तन' मैंने मंचित भी किये। उसके बाद तो कई नाटककारों को पढ़ने का मुझे अवसर मिला। नाटककारों में मैं सर्वाधिक प्रभावित हुआ श्री विष्णु प्रभाकर जी से। पता नहीं क्यों मैं नाटकों को मनोरंजन का साधन मात्र नहीं मानता बल्कि समाज के समस्त क्षेत्रों को आन्दोलित करने का सशक्त माध्यम मानता रहा हूँ। मेरी यह भी मान्यता रही है कि नाटक में वह सब कुछ होना चाहिये जो दर्शक को रंगमंच और नाटक से बाँधे रख सके और दर्शक के मन में इतनी गहराई तक चोट करे कि वह कुछ सोचने पर विवश हो जायें।

मुझे पता नहीं कि मैंने पहला एकांकी कौन सा लिखा, किसके लिये लिखा और कब लिखा। क्योंकि यह सिलसिला तो सन् १९६२ से शुरू हो गया था। जब रेल सेवा में पदोन्नति हुई और मैं मंसूरी आउट एजेन्सी में नियुक्त हुआ। वहाँ दिन के निश्चित ८ घंटे की जन सेवा, शेष समय मेरा अपना, मैंने वहाँ इङ्गलिश स्कूलों के लिये कई एकांकी लिखे। किन्तु उसी वर्ष मैं मुरादाबाद बुला लिया गया रेलवे की सांस्कृतिक गतिविधियों को केन्द्रित, सुसंगठित व संचालित करने और यही से शुरू होती है एकांकी लेखन की यात्रा।

मैंने केवल मंचन करने के लिये ही एकांकी लिखे विशेष कर फरमाइशों पर लायन्स क्लब, लाइनेस क्लब, इन्हरवील, लेडीज क्लब, नगर के डिग्री व इन्टर कालिजों व मौन्टेसरी स्कूलों तथा रेलवे के स्थापना दिवस, वार्षिकोत्सव या अन्य राष्ट्रीय पर्वों पर मंचन हेतु।

वैसे मैं सन् १९८० को वह वर्ष मानता हूँ जबसे मैं सही दिशा में सोचने और लिखने के लिये प्रेरित हुआ। इसी वर्ष तीन बाल एकांकी लिखे मैंने अपनी संस्था आदर्श कला संगम द्वारा आयोजित रंग शिविर के लिये जो साम्प्रदायिक उपद्रवों की भेंट चढ गये। किन्तु जन्म हुआ इस परिस्थिति से उस एकांकी का जिसे मैं अपना प्रथम एकांकी मानकर चल रहा हूँ। लम्बे अर्से तक चलने वाले करफ्यू के दौरान नागरिक सुरक्षा प्रशिक्षक के नाते घूमते फिरते जो कुछ मैने देखा वह "कर्फ्यू सख्त कर्फ्यू" में कलमबद्ध हो गया।

यही एकांकी १९८३ की रामपुर आकाशवाणी द्वारा आयोजित नाट्य लेखन प्रतियोगिता के १४० नाटकों को पीछे छोड़ जब प्रथम स्थान पर आया तो मेरी कलम को और बल मिला। आकाशवाणी रामपुर के राष्ट्रीय नाट्य समारोह में जब मेरा नाटक "कर्फ्यू सख्त कर्फ्यू" प्रसारित हुआ तो श्रोताओं के ढेर सारे पत्रों ने मुझे बहुत आन्दोलित किया साथ ही पुरस्कार समारोह में केन्द्र निदेशक श्री जुबेर रिजवी के इन शब्दों ने मुझे नाट्य लेखन से सदा के लिये जोड़ दिया "कि नये लेखकों की खोज के लिये आयोजित की गई प्रतियोगिता में पुरस्कृत लेखकों से मैं आशा करूँगा कि वह कम से कम हर माह एक एकांकी लिख कर हमें भेजेंगे।" बाद में मैं रेडियो पर तो राजनीति का शिकार हो गया और अधिक रेडियो के लिये मन तैयार नहीं हुआ किन्तु रंगमंच की तरफ मैं फिर मुड़ गया।

मेरा पहला प्रयास आपके सामने है। इसमें तीन एकांकी और एक मोनो प्ले है। मैं इसके लेखन में अपने गुरूजनों और साथी रंगकर्मियों का आभारी हूँ जिनके आशीर्वाद और शुभ कामनाओं से मैं कुछ लिख सका जिनमें चित्रकार स्व० श्री राम सिंह, श्री कामेश्वर सिंह, श्री मा० फिदा हुसैन 'नरसी', डा० कमल वशिष्ठ, प्रो० महेन्द्र प्रताप, श्री माहेश्वर तिवारी, श्री पुष्पेन्द्र वर्णवाल व श्री प्रदीप शर्मा को मैं विशेषतौर पर याद कर रहा हूँ। मेरे विचार पांडुलिपियों तक ही सीमित रह जाते अगर मुझे फिल्म कलाकार श्री मल्हार सिंह के अग्रज श्री अशोक विश्नोई का सम्बल न मिला होता। उन्होंने स्वयं अपने प्रकाशन के अन्तर्गत इस पुस्तक को छापने का सुझाव दिया पुस्तक के छपने के कार्य से लेकर आपके हाथों तक पहुंचाने में श्री सतीश कुमार विश्नोई का योगदान तो भुलाया नहीं जा सकता और अन्त में मैं विशेष आभार प्रदर्शन कर रहा हूँ श्री शंकर दत्त पांडेय का जिन्होंने निःस्वार्थ, मुझे अविस्मरणीय योगदान दिया।

मैं अपने इस प्रयास पर पाठकों के विचारों का स्वागत करूँगा ताकि मैं अपनी कलम को सुधार सकूँ।

विजय दशमी
२ अक्टूबर '८७
मुरादाबाद

बलवीर पाठक

नाटकों को रंगमंच पर प्रस्तुत करने से पहले निःशुल्क अनुमति निम्न पते पर लिखकर अवश्य प्राप्त कर लें।

अशोक विश्नोई

दूरभाष : २६२०५

सागर तरंग प्रकाशन
२६-ए, गांधीनगर
मुरादाबाद

दो शब्द

प्रकाशन की चौथी लहर आपके हाथों में सौंप कर प्रसन्नता अनुभव कर रहा हूँ। मैं 'सागर तरंग प्रकाशन' के माध्यम से नगर के एक ऐसे व्यक्तित्व से परिचय करा रहा हूँ, जो विगत ४० वर्षों से रंगमंच से जुड़े हैं, और नगर में अपनी पहचान बनाये रख सकने में सक्षम हैं। बातों-बातों में इतना लिखना चाहूँगा की मेरे व श्री बलवीर पाठक के बीच एक आत्मीयता का सम्बल है। वह मेरे अग्रज हैं। शहर मुरादावाद में इनका नाम मैंने काफी सुन रखा था परन्तु परिचय नही था। एक दिन मेरी इच्छा पाठक जी से मिलने के लिए जाग्रत हो उठी और मैंने अपने अभिन्न मित्र श्री पुष्पेन्द्र बर्णवाल के समक्ष यह भावना प्रकट की, उनका संक्षिप्त परन्तु ठोस उत्तर पाकर मैं इतना संतुष्ट हुआ कि आज भी वह समय मुझे याद आ जाता है। उनका कथन पाठक जी की पहचान के लिये केवल इतना था कि नगर में नैपाली टोपी और उस पर नैपाली चिन्ह लगाये जो व्यक्ति तुम्हें दिखाई दें वही पाठक जी हैं और वास्तव मे ऐसा ही निकला। फिर उनसे सम्पर्क हुआ और आज यह सम्पर्क घनिष्ठता की ओर बढ गया।

पाठक जी चूंकि रंगमंच से जुड़े है और मुझको भी कुछ रंग मंच से लगाव है मैंने अनुभव किया कि एक प्रतिभावान व्यक्ति जो २४ घन्टे में नाटक लिखने की क्षमता रखते है, जिसके कई नाटक फाइल में ही बद पड़े है, परन्तु प्रकाश में नही आ सके है। उनको पाठको, नाटक प्रेमियों के हाथो में पहुँचाने का विचार करने लगा। यह मेरा सौभाग्य है कि उन्होंने अपनी स्वीकृति प्रदान कर नाटकों को प्रकाश में लाने के लिये अपना सहयोग दिया। जन-जन की भावनाओं को झझोरता हुआ 'राष्ट्रीय एकता एवं सद्भावना' पर आधारित नाटकों का यह संकलन 'कर्फ्यू सस्त कर्फ्यू' के नाम से प्रकाशित किया जा रहा है। लीजिये प्रकाशन की यह चौथी कड़ी आपके हाथों में है। आपकी प्रतिक्रिया जानने हेतु प्रतिक्षा में रत।

—अशोक विश्नोई
प्रकाशक

कर्फ्यू सख्त कर्फ्यू

पात्र

१– अहमद	एक राष्ट्रीय मुसलमान जो समय के साथ बहक गया।	आयु ४० वर्ष
२– अनवरी	अहमद की पत्नी, राष्ट्रवादी विचारधारा की स्त्री।	आयु ३० वर्ष
३– सलमा	अनवरी की भूखी प्यासी लड़की	आयु ६ वर्ष
४– सलीम	अनवरी का भाई जो पाकिस्तान से लौटकर आया है।	आयु ३५ वर्ष
५– रमेश	पंडित शिवनाथ का लड़का। अहमद का पड़ौसी।	आयु २५ वर्ष
६– शिवनाथ	अहमद का पड़ौसी दोस्त।	आयु ४५ वर्ष
७– सुमन	पं० शिवनाथ की लड़की।	आयु ८ वर्ष
८– दरोगा	बी० एस० एफ का दरोगा जो स्टेज पर नहीं आता। पृष्ठ भूमि से आवाजें सुनाई देती हैं।	

कर्फ्यू सख्त कर्फ्यू

इस एकांकी की कहानी मुरादाबाद नगर में सन् १९८० में घटी एक हृदयविदारक घटना पर आधारित है जब शहर के लोग एक लम्बे अरसे तक अपने अपने मकानों के अन्दर बन्द रहने पर मजबूर कर दिये गये थे। लगा था बाहर कर्फ्यू सख्त कर्फ्यू। रोज कमाकर खाने वालों के सामने एक समस्या उत्पन्न हो गई थी, अपना और अपने बीबी बच्चों का पेट भरने की–

बस इसी माहौल में शुरू होता है यह एकांकी—कर्फ्यू सख्त कर्फ्यू।

दृश्यबन्ध–यह नाटक एक मकान के सैट पर चलेगा जो एक मामूली मुस्लिम परिवार का घर दर्शाता है। रंगमंच पर पीछे मकान की एक दीवार दिखाई देती है जिसके पीछे पं० शिवनाथ का मकान है। इसी दीवार की दो ईंटें नाटक के दौरान निकल कर गिरती हैं। उसी छेद से शिवनाथ और सुमन बातचीत करते हैं। बाद में इसी दीवार पर अहमद बन्दूक की बट से मार करके इसका कुछ भाग गिराता है जिसमें से सुमन व शिवनाथ निकल कर मंच पर (अहमद के मकान में) आते हैं।

सामने की दीवार के दायें बायें तिरछा करके दरवाजे बन जायें तो अच्छा रहे। बायीं ओर वाला अन्दर कोठे में जाने के लिये और दायीं तरफ वाला बाहर गली में निकलने के लिये जिस पर रमेश दस्तक देता है और बाद में पीछा करता गुन्डा। फ्लैश बैक सीन सलीम का पृष्ठ भूमि संगीत देकर इसी सैट पर निकालें और छत पर अहमद व शिवनाथ का मिलन पृष्ठ भूमि संगीत देकर दीवार के ऊपर के भाग में छाया चित्रांकन शैली में दिखा सकते हैं या सम्भव हो तो डबल स्टोरी सैट बनाये। गुन्डे के बचकर भागने, छत पर चढ़ने, गोली से मारे जाने और सैनिकों की भाग दौड़ आदि पृष्ठ भूमि में स्वरों व संगीत से उभारें। ○

कर्फ्यू सरुत कर्फ्यू

(सन्नाटे का अहसास, बीच-बीच में कुत्तों के भौंकने और भारी बूटों की पास आती और दूर जाती आवाज़ के बीच औरत की आवाज़ उभरती है।)

अनवरी—सो गई। रोटी की रट लगाते-लगाते बेचारी को नींद आ ही गई मगर कब तक ? जागेगी तो भूख इसे फिर सतायेगी और तब·····

·····देखूं। शायद पीपे के किसी कोने में दाल या चावल के कुछ दाने पड़े मिल जायें तो कम से कम आज का दिन तो निकल ही जायेगा। (खाली पीपों और डिब्बों को खोलने और झाड़ने की आवाज) सब खाली। या परवर दिगार, मदद कर। मेरी बच्ची को इस मुसीबत से निजात दिला।

सलमा—रोटी·····अम्मी जान। भूख लगी है।

अनवरी—थोड़ा और सब्र कर बेटी। तेरे अब्बा रोटी का ही इन्तजाम करने ही गये हैं।

सलमा—रोटी तो आप पकाती हो अम्मी।

अनवरी— रोटी तो घर में कई दिनों से नहीं पक रही सलमा ! आटा-दाल ही नहीं रहा और उधर बाजार भी बन्द पड़ा है।

सलमा--बाजार तो हफ्ते में एक ही दिन बन्द होता है, मंगल को न, अम्मीजान।

अनवरी—अब तो हर रोज मंगल हो गया है, बेटी। पर तू न घबरा। तेरे अब्बा अब आते ही होंगे।

सलमा—सुमन को बुला दो अम्मीजान ! मैं उसके साथ खेलूँगी।

अनवरी—नही सलमा ! तेरे अब्बा नाराज होंगे। वक्त ने कुछ ऐसा पलटा खाया है कि अब तू सुमन से नहीं मिल सकेगी, बेटी ! (कदमों की आवाज सुनकर) ले, तेरे अब्बा आ गये। मैं रोटी लेकर अभी आई। (अनवरी अहमद की बातचीत)।

अनवरी—शि-···। धीरे बोलियेगा। सलमा जाग रही है। कुछ मिला ?

अहमद—नही, बेगम ! बाहर तो झाँक ही नहीं सकता। छत पर चढ़ता तो गोली मार देते पुलिस वाले। क्या करूँ ? कहाँ जाऊँ ? कुछ समझ में नही आता। उफ़ ! इतना सख्त कर्फ्यू तो पहले कभी नही देखा।

अनवरी—ऐसे झगड़े भी तो पहले कभी नही हुए। इधर हुए, उधर दब गये। लेकिन इस बार तो आग ऐसी भड़की है कि ठंडी होने में ही नही आती। एक महीना होने जा रहा है। इधर कुछ शान्ति होती है तो उधर खून खराबा हो जाता है। क्या हो गया है लोगों को ?

सलमा—अम्मीजान ! भूख लग रही है, रोटी लाओ।

अनवरी—अभी लाई बेटी ! सुनो जी ! मुझ से नही देखी जाती सलमा की यह हालत। कब तक झूठी तसल्लियाँ दे-देकर बहलाऊँ। कुछ तो करो। पड़ौस से थोड़ा और माँग लो।

अहमद—रहमान से कहा था। कहाँ तक दे बेचारा ? उसके घर में भी लाले पड़ने लगे है। रोज कुँआ खोद कर पानी पीने वाला कब तक जमा रकम से काम चला सकता है। उधर बाईं तरफ वाले सुल्तान भाई भी खल्लास हो चुके हैं। कल रस्सी में बाँधकर अपने घर से एक पर्चा लटकाया था जिसमें मुझ से कुछ इमदाद माँगी थी मगर मैंने मजबूरी जाहिर कर दी।

सलमा—पानी, पानी ही पिला दो अम्मी जान। गला सूख रहा है।

अनवरी—पानी ! अभी लाई बेटी। (घड़े से पानी लेना)। ले, बेटी ! पानी पी। (पानी पीने की आवाज)।

सलमा—माँ ! पानी पेट में लगता है।

अनवरी—बस, रोटी ला ही रही हूँ, बेटी ! दो मिनट और ठहर जा। सुनो जी ! पिछवाड़े वाले पंडित जी से ही कुछ माँग लो। सलमा की भूख···

अहमद—तुम्हारा दिमाग खराब हो गया है क्या ? जिन लोगों से हमारा झगड़ा चल रहा है, तुम उन्हीं के सामने हाथ फैलाने को कह रही हो ?

अनवरी—लेकिन हमारी और पंडित जी की तो कभी लड़ाई नहीं हुई। कर्फ्यू लगने से पहले तक तो हम छत पर खड़े होकर सुमन की माँ से बातें करते रहे हैं। अपनी सलमा भी सुमन के साथ गुड्डा-गुड़िया खेलती रही है। अगर ये झगड़े न होते तो सुमन का गुड्डा हमारे घर बारात लेकर आता।

अहमद—तुम समझती क्यों नहीं बेगम कि पंडित जी का धर्म दूसरा है और हमारा मजहब दूसरा। यह लड़ाई दो मजहबों की लड़ाई है।

अनवरी—और क्या कल तक तुम्हारे मजहब अलग-अलग नहीं थे ? तो फिर आज क्या हो गया ? तुमसे किसी ने लड़ने को कहा था क्या, पंडित जी से ?

अहमद—नहीं तो।

अनवरी—तो फिर हम और पंडित जी क्यों लड़ें ? हम एक दूसरे के दुख-सुख में काम आते रहे हैं, एक-दूसरे की मदद करते रहे हैं। हम उनकी दीवाली और वह हमारी ईद मनाते रहे हैं। तुम तो बेकार ही डर रहे हो जी ! यह तो चन्द गुन्डे हैं जो अपनी खुदगर्जी के लिये दूसरों के अमनो चैन से खिलवाड़ करते हैं। न खुद चैन से खाते हैं और न दूसरों को खाने देते हैं।

अहमद—तुम्हारी बात ठीक हो सकती है बेगम ! मगर जब मजहब खतरे में पड़े तो हर एक का फर्ज बनता है कि वह उसकी हिफाजत के लिये सब कुछ कर गुजरे।

अनवरी—लेकिन मजहब में यह कहाँ लिखा है कि बेवजह बेगुनाहों का खून बहाया जाये। हमें तो यही बताया गया है कि बेगुनाहों का खून बहाने वालों को खुदा की तरफ से भी बख्शाइस नहीं है। मगर नाश जाये इन सर-फिरों का—मरों ने मजहब को बदनाम करके रख दिया है।

सलमा—अम्मीजान ! जोरों से भूख लगी है। रोटी दो न।

अनवरी—मुझ से नही देखी जाती सलमा की भूख। मैं सुमन की माँ से कुछ माँग लाती हूँ।

अहमद—पागल हो गई हो। छत पर जाओगी तो गोली मार देगा कोई।

अनवरी—मार देगा तो मर जाऊँगी मगर मै अपनी बच्ची को भूख से तड़पता नही देख सकती। कल से इसके मुँह में एक दाना भी नही गया है।

अहमद—बेगम, जरा सोचो तो। अगर पंडित जी ने रोटी मे कुछ मिलाकर दे दिया तो.....

अनवरी—कैसी बातें करते हो जी ? जिगरी दोस्त पर इतनी जल्दी बेएतबारी। कल तक तो साथ-साथ खाते-पीते थे। घंटों गप्पें लड़ाया करते थे और अब शक-ओ शुबाह की दीवार खड़ी कर रहे हो अपने बीच मे। सलमा के अब्बा ! बरसों के ताल्लुकात इतनी जल्दी कैसे बदल सकते है। पंडित जी तो बेचारे बड़े सीधे स्वभाव के हैं। न किसी के झगड़े में न किसी के टंटे में। याद है पिछले साल इन्ही दिनों जब अफवाहों का बाजार गरम था तब पंडित जी की क्या हालत थी।

(फ्लैश बैक सीन से)

शिवनाथ—अहमद भाई ! ओ, अहमद भाई !

अनवरी—अजी, सुनते हो ! पंडित जी आवाज दे रहे हैं।

अहमद—(करीब आती हुई आवाज) इसे भी चैन नही जरा घर में। कुछ बात हुई, बाहर निकल पड़ता है मेरा पट्ठा। जब हमारी छतें आपस में मिली हुई हैं तो छत से बात नही कर सकता। बताओ, जरा में कुछ हो जाये तो.....

अनवरी—अजी, वह छत पर से ही आपको बुला रहे है।

अहमद—हाँ ! यह हुई ना बात अकलमन्दी की। लाओ, दो पान लगाओ। एक मेरा और एक पंडित जी का।

अनवरी—(कत्थे चूने की कुलियों की खड़खड़ाहट के बीच)। जरा पंडित जी की हिम्मत बँधा देना। पंडिताइन बहुत घबरा रही थीं। पूछ रही थीं कि रमेश को कालिज भेजूँ या न भेजूँ। मैंने तो मना कर दिया और पंडित जी को भी दुकान न खोलने की सलाह दी।

अहमद—बस यही तो बेवकूफी है। कुछ न हो तो हो जाये। बेगम, कुछ लोगों का काम झूठी अफवाहें फैलाकर अपना उल्लू सीधा करना होता हैं। लाओ मेरा पान दो और पंडित जी का कागज में लपेट दो। बेचारा धूप में छत पर खड़ा तप रहा होगा।

(जीना चढ़ने की आवाज)

अहमद—आदाब अर्ज है पंडित जी। लो भाई, तुम्हारी भाभी ने पान दिया है।

शिवनाथ—शुक्रिया, अहमद भाई।

अहमद—क्या बात है शिवनाथ ? आज छत पर से गुफ्तगू की जा रही है।

शिवनाथ—रमेश की माँ कह रही थी कि रात में कोई गुप्त मीटिंग हो रही है तुम्हारी ?

अहमद—अरे ! ऐसी मीटिंगें तो आये दिन होती ही रहती हैं। हमारे लोग भी कह रहे थे कि तुम्हारी भी कोई मीटिंग होती है। मगर तुम फिकर न करो। जाओ दुकान खोलो और रमेश को भी स्कूल भेजो। घबराने की कोई बात नहीं है। जब तक अहमद जिन्दा है तुम्हारी तरफ कोई आँख उठा कर भी नहीं देख भकता।

शिवनाथ—ठीक है अहमद ! मैं जा रहा हूँ।

(कदमों की आवाज)

अहमद—आप क्यों लौट आये ?

शिवनाथ—यार, बुरा नहीं मानना। मैं अहतियातन राशन-पानी भर लेना चाहता हूं। अगर कहो तो तेरे घर भी पहुँचा दूँ।

अहमद—अबे पंडत ! बड़ी दूर की सोचता है। तू ही भर ले अपने यहाँ। अगर जरूरत पड़ी तो तेरे घर से ही मँगवा लेंगे। अरे, हमारा क्या ? मजदूर आदमी हैं। रोज कुआँ खोदना रोज पानी पीना। मगर तू इतना मत डर यार ! जब तक हम तुम जैसे इन्सान जिन्दा हैं कुछ नही होने वाला। जा, बेफिक्री से काम पर जा।

शिवनाथ—अच्छा यार ! शाम को मिलेंगे।

अहमद—खुदा हाफिज।

(पलैश बैक से बदलने का संगीत)

अनवरी—(ठंडी सांस लेकर) अब वह पहली जैसी मुहब्बत नही रही लोगों में सलमा के अब्बा—दिलों में दरार पड़ती जा रही है।

अहमद—जमाना बहुत बदल गया है बेगम।

अनवरी—मै नही मानती। पंडित जी तो आज भी वैसे ही है जैसे पहले थे। रमेश जैसा लिहाज पास वाला लडका आज के जमाने में होना मुश्किल है और उसकी माँ भी मुझ में और अपनी सगी बहन में फर्क नहीं समझती।

अहमद—मै यह मानने को तैयार नही। मेरा दिल गवाही नही देता।

अनवरी—अब तुम्हारा दिल गवाही क्यों देगा ? तुम पर सलीम का जादू जो चल गया।

अहमद--कैसी बाते करती हो अनवरी ? तुम्हें गलतफहमी हो गई हैं।

अनवरी—गलतफहमी मुझे नही, तुम्हें हो गई है। जब से सलीम का बच्चा यहाँ आया है तुम्हारे सोचने समझने का तरीका ही बदल गया है। तुम्हारी अकल सिमट कर मजहब के तंग दायरे में बँध गई है।

अहमद—सलीम को क्यों भला-बुरा कहती हो बेगम। वह तो तुम्हारा भाई है।

अनवरी—भाड़ में जाय ऐसा भाई। इसने हमारा सुख चैन ही लूट लिया है। दो वक्त आराम से रोटी मिल जाती थी वह भी कम्बख्त ने छीन ली।

अहमद—मत भूलो, अनवरी, सलीम ने तुम्हें हिफाजत के लिये बन्दूक लाकर दी। रुपये-पैसों से तुम्हारी मदद करता है और तुम·····।

अनवरी—नहीं चाहिये हमें उसका पैसा। ले जाय अपनी बन्दूक। लगता है मरा इसी तरह हथियार और पैसे बाँटकर गरीबों का ईमान खरीद रहा होगा, उन्हें मजहब के नाम पर गुमराह कर रहा होगा। मेरा माथा तो उसी दिन ठनका था. जब वह यहां आया था।

(फ्लैश बैक संगीत शुरू)

सलीम—हलो····· आ·····पा।

अनवरी—कौन ? अरे, सलीम तू !

सलीम—हाँ, आपा, मगर इस तरह आँखें फाड़कर क्या देख रही हो ? मैं वही सलीम हूँ, तुम्हारा नटखट भाई।

अनवरी—नहीं सलीम, तू बिल्कुल बदला हुआ नजर आ रहा है।

सलीम—अरे आपा ! मेरी शानो-शौकत देखनी हो तो जरा बंगले पर तशरीफ लाओ।

अनवरी—अच्छा ?

सलीम—हाँ, आपा ! बड़े ठाट हैं। बर्तनों के कारखाने में हथौड़ा चलाने वाला सलीम अब लाखों में खेलता है। नौकर-चाकर, कारिन्दे, सलाहकार, पी० ए० सब मेरे आगे-पीछे घूमते रहते हैं।

अनवरी—जहे-किस्मत, सलीम ! ऐसा क्या काम करते हो ?

सलीम—खाना बदोशों की तरह इधर-उधर घूमता रहता हूं। आज इस शहर में तो कल दूसरे शहर में। मगर तुमने यह क्या हुलिया बना रक्खा है ? देखता हूं जैसा छोड़ गया था उसमें कोई फर्क नहीं हुआ।

अनवरी—नहीं सलीम। हम बहुत खुश हैं। दो वक्त आराम से रोटी मिल जाती है और सुख की नींद। और क्या चाहिये ?

सलीम—वाह, यह भी कोई जिन्दगी है। अरे, आराम से खाओ-पियो और मौज करो। खैर, यह तो मैं अहमद भाई से बात करूँगा। पहले यह तो बताओ कि मुझे मामू कहकर पुकारने वाली टीम के मेम्बर कहाँ हैं ?

अनवरी—सलमा ऊपर छत पर सुमन के साथ गुड़िया-गुड्डे खेल रही है।

सलीम—और ?

अनवरी—वस सलमा ही।

सलीम—सिर्फ सलमा ! इसका एक और भाई भी नहीं। एक ही पर गिनती खतम !

अनबरी—हाँ, एक ही बच्चा अगर ढंग से पल जाये तो आज के जमाने में बहुत है। पर लगता है तूने जरूर बच्चों की फौज खड़ी कर दी है।

सलीम--फौज तो नही आपा, लेकिन हाँ, चार तो हैं। अच्छा छोड़ो, यह बताओ कि पिछवाड़े अब कौन रहता है ?

अनवरी—वही, जो तुम्हारे सामने रहते थे—पं० शिवनाथ।

सलीम—अच्छा, वह हजरत अभी भी जमे हुए है।

अनवरी—हाँ, सलीम, अब तो कुछ ऐसा हो गया है कि सलमा के अब्बा और पंडित जी खाना खाने के बाद जब तक दो घंटे बतिया न लें तब तक चैन नहीं पड़ता। रोज सुबह शाम घूमने जाते हैं। यहाँ तक·····।

सलीम—दोनों एक साथ खाते-पीते हैं और एक साथ जीते है यही न ?

अनवरी—हाँ, कम से कम तीज-त्यौहार पर तो एक ही दस्तरखवान पर खाते हैं। सलमा तो हर वक्त सुमन के घर पड़ी रहती है और कभो-कभी खेलते-खेलते वहीं सो भी जाती है।

सलीम—यह ज्यादा घुलना-मिलना अच्छा नहीं आपा। खैर, यह भी अहमद भाई से बात करूँगा। तुम अब रोटी पकाने की बात सोचो। जब तक अहमद भाई आते हैं मैं जरा कमर सीधी कर लूँ। लो, यह मेरा रिवाल्वर संभालकर रख दो।

अनवरी—रिवाल्वर, तेरे पास ! नहीं-नहीं अपने ही पास रख।

सलीम—अच्छा, छोड़ो। अहमद भाई से बात करूँगा। यह बताओ, कब तक आयेंगे, दूल्हा भाई ?

अनवरी—नमाज पढ़ने गये हैं, नीम की मस्जिद में। वैसे तो जल्दी आ जाते हैं, मगर कभी-कभी पंडित जी की दूकान पर गप्पें लड़ाने बैठ जाते हैं तो फिर उन्हें घर की फ़िक्र नहीं रहती कि कोई खाने पर इन्तजार कर रहा होगा। बस, चाट-पकौड़ी से पेट भरकर आयेंगे पंडित जी के साथ। और आज तो वैसे भी जुम्मा है, काम की फिकर तो होगी नहीं।

सलीम—अच्छा, मैं तो रोटी खाकर लम्बी तानता हूँ। जब आ जायें तो जगा देना। कुछ जरूरी बातचीत करनी है।

अनवरी—अच्छा मैं रोटी लाती हूँ।

(कदमों की दूर जाती आवाज)

सलीम—लगता है आपा और दूल्हा भाई पर फार्मूला फिफ्टी-फाईव लागू करना होगा तब काम चलेगा।

(चम्हाई लेने की आवाज के साथ फ्लैश बैक संगीत खत्म)

अनवरी—मैं उसे अगर अपने पास से चले जाने को न कहती तो वह तुम्हें और न जाने कितना गुमराह करता। वह यहाँ मुझसे और तुमसे मिलने नहीं आया है। न जाने कम्बख्त किस मकसद से यहाँ आया है ? अच्छा हुआ, वह खुद ही चला गया। (दरवाजे पर घबराहट में थपथपाहट)

अनवरी—लो, कोई नई मुसीबत आई। इतनी रात गये कौन हो सकता है ?

अहमद—शायद पुलिस वाले होगें। वक्त-बेवक्त वे ही परेशान करते रहते हैं। तुम सलमा के पास जाओ। मैं देखता हूँ (कदमों की आवाज) कौन ? कौन है ?

रमेश—(घबराई हुई धीमी आवाज) मैं हूँ चचा जान, रमेश ! आपका पड़ौसी। दरवाजा खोलिये। मेरी जान खतरे में है।

अहमद—रमेश ? पंडित शिवनाथ का लड़का ! नहीं, दरवाजा नहीं खुलेगा ।

रमेश—चचा जान ! वह मुझे मार डालेंगे । मुझे बचा लीजिये ।

अहमद—मैने कहा ना, दरवाजा नहीं खुलेगा ।

अनवरी—कौन है ? किस पर बिगड़ रहे हो ?

रमेश—चच्ची जान, मुझे बचा लीजिये । वह मेरा पीछा कर रहा है । वह मुझे मार डालेगा ।

अनवरी—खोल दीजिये न दरवाजा । अपना रमेश है ।

अहमद—तुम नहीं जानतीं, अनवरी ! रमेश का इस तरह आना·····

रमेश—चची जान·····प्लीज·····मुझे बचा लीजिये ।

अनवरी—खोलती हूँ, बेटा ! हटो जी दरवाजे पर से·····

अहमद—अनवरी·····

(कुंडी खुलने और बन्द होने की आवाज)

अनवरी—रमेश, तू ! इस वक्त····· ।

रमेश—वो···वो··· ! चची जान, मैं पुलिस वैन में स्टेशन से आया था । चौराहे पर मुसाफिरों को उतारकर वह आगे बढ़ गई । मैं जैसे ही गली में घुसा तो एक गुण्डे ने मुझे घेर लिया । बड़ी मुश्किल से आवचक में कूदकर भागा हूँ । मुझे बचा लीजिये, चच्चीजान । मुझे बचा लीजिये ।

अनवरी—तूने ठीक किया जो इधर आ गया । अब ऐसा कर पुलिस की आँख बचाकर तू छत पर से अपने घर में कूद जा । मगर होशियारी से । कोई देख न ले·····जा निकल जा ।

(दूर जाते कदमों की आवाज)

अनवरी—तुम्हें क्या हो गया है ? जो लपक गये बन्दूक लाने । बेचारा बिजनेस-टूर से एक महीने बाद घर लौटा है और तुम·····

अहमद—अनवरी, तुम कुछ समझती क्यों नहीं ? ऐसे माहौल में····· ।

अनवरी—मैं सब समझती हूँ । तुम्हारा खून पानी हो सकता है सबका नहीं । जब तक मैं जिन्दा हूँ ऐसा नहीं होने दूँगी ।

अहमद—तुम कुछ नहीं जानतीं। तुम्हें कुछ नहीं पता कि कौन कब आस्तीन में छिपा खंजर निकाल ले। पीपल मुहल्ले में अब्दुल्ला और सरजू के साथ ऐसा ही तो हुआ। वह चीखते रह गये लेकिन जालिमों ने उन्हें भी नहीं बख्शा। इतना भी तो ख्याल नहीं किया कि इन दोनों की तमाम जिन्दगी एकता और इत्तहाद के लिये वक्फ थी। अच्छी सजा मिली इन लोगों को रहम खाकर गुन्डों को पनाह देने की।

अनवरी—यह तो इन्सानियत से गिरी हुई बात है।

अहमद—अनवरी, दंगे और फसाद में सारी पहचानें मिट जाती हैं। अच्छा खासा इन्सान हैवान हो जाता है। (दरवाजे पर थपथपाहट) अब कौन है ?

अहमद—जाओ, तुम्हीं जाओ। देखो, तुम्हारे रहमो-करम का कोई और खवास्तगार होगा ? सोच क्या रही हो, जाओ दरवाजा खोलो।

(दरवाजे पर फिर थपथपाहट)

अनवरी—कौन ?

अजनबी—दरवाजा खोलो-(थपथपाहट) मैं कहता हूं दरवाजा खोलो।

अनवरी—कौन हो भाई ?

अजनबी—यहाँ कोई आया है। हमें उसकी तलाश है।

अहमद—(धीरे से) बेगम दरवाजा नहीं खोलना। (जोर से) यहाँ कोई नहीं आया भाई।

अजनबी—नहीं, हमने अपनी आँख से देखा है। (थपथपाहट)-दरवाजा खोलो वरना.....

अहमद—चले जाओ, भाग जाओ यहाँ से, वरना मैं गोली मार दूँगा।

(पृष्ठ भूमि में दौड़ भाग)

आवाज—हैन्ड्स अप ! हथियार नीचे फेंक दो। गुंडप्पा गिरफ्तार करलो इसे। निकल कर भाग गया ? बचकर जाएगा कहाँ ? पकड़ लो साले को ! दीवार पर चढ़ेगा ? टाँग खींच लो हरामजादे की। निकल गया ? मगर मेरी पिस्तौल से बचकर कहाँ जायेगा ?

(पिस्तौल चलने की आवाज, चीख के साथ किसी के गिरने की आवाज)

आवाज—गुंडप्पा, उठाओ इसे और जीप में अस्पताल ले जाओ। कोशिश करना बच जाये, शायद कुछ राज मालूम हो। जाओ, जल्दी करो।

(जीप के पास आने और रुक कर फिर चलने की आवाज)

अहमद—मारा गया शायद।

अनवरी—ठीक हुआ। फसादियों की यही सजा है।

(दीवार पर हथौड़े चलने की आवाज)

अहमद—यह ठुक ठुक की आवाजें कहाँ से आने लगीं, बेगम ?

अनवरी—श्री·····सुनने की कोशिश करो।

अहमद—अरे ! यह तो पीछे की दीवार पर कोई हथौड़े चला रहा है।

अनवरी—पंडित जी की तरफ से ?

अहमद—हौ ! मैंने कहा न था कि यह पंडित का बच्चा भी औरों की तरह हैवान बन गया है। मगर तुम मानती ही न थीं। अब देख लो अपनी आँखों से। लगता है गुण्डों के साथ मिलकर यह हम पर पीछे से हमला करेगा। और रहम करो रमेश पर। दूध पिलाओ सांप के बच्चे को।

अनवरी—सलमा के अब्बा, दीवार की दो ईटे निकलकर गिरने वाली हैं। अब क्या होगा ?

अहमद—मेरी बन्दूक लाओ और तुम सलमा को लेकर कोठे में चली जाओ।

अनवरी—नहीं, नहीं सलमा के अब्बा। ऐसा न करना, तुम्हें सलमा की कसम।

अहमद—हट जाओ अनवरी मेरे रास्ते से। कुत्ते की मौत मरने से पहले दस-पाँच को मारकर ही दम तोड़ूंगा।

अनवरी—नहीं नहीं, गजब हो जायेगा।

अहमद—मैं कहता हूँ छोड़ दे बन्दूक की नली वरना·····

अनवरी—आह (चीख के साथ गिरने की आवाज)

सलमा—अम्मीजान·····

अनवरी—मेरी बेटी·····आ, मेरी गोद में आ जा।

सलमा—अम्मीजान, अब्बा बन्दूक लेकर क्या करेंगे ?

अनवरी—इन पर जनून सवार है बेटी ! खुदा खैर करे।

(दूर आती आवाज) (ठक-ठक की आवाज खत्म होने के साथ दो ईंटों के गिरने की आवाज)

अहमद—खबरदार, अगर किसी ने भी इधर आने की कोशिश की तो एक-एक को गोली से भून दूँगा।

शिवनाथ—अहमद भाई, तुम्हें गलतफहमी हो गई है। अरे भाई ! तुम्हारी तरफ आना तो दूर, कोई आँख उठाकर भी नहीं देख सकता। घबराओ नहीं, दोस्त ! यह सुमन बहुत जिद कर रही थी सलमा से मिलने की। ले सुमन, तू ही अंकल से बात कर ले।

सुमन—नमस्ते अंकल ! क्या बात है ? आप बड़ा गुस्सा कर रहे हैं। यह बन्दूक तो हटाइये मोकले से। मुझे सलमा से मिलना है। सलमा····· ओ, सलमा, देख मम्मी ने तेरे लिये बेसन के लड्डू बनाये हैं, पूरी बनाई हैं। अंकल, सलमा को बुलाइये ना। आप तो बोलते ही नहीं। अरे ! आप तो रोने लगे अंकल। बड़े आदमी थोड़े ही रोतें हैं अंकल ! बच्चे रोते हैं।

अहमद—मुझे माफ कर दे बेटी। मैं तो बच्चों से भी गया गुजरा साबित हुआ हूँ।

सुमन—नहीं अंकल, ऐसा नहीं बोलते।

अहमद—मेरी अक्ल पर पत्थर पड़ गये थे, बेटी ! मैंने तुम सबको शक की निगाह से देखा।

शिवनाथ—बच्चों से ऐसी बातें नहीं किया करते अहमद। सुमन, जा बेटी, रसोई घर से टिफिन उठा ला और अपनी सहेली को खाना खिला।

सुमन—अच्छा पापा, अभी लाई (दूर जाती आबाज)

अहमद—शिवनाथ, मेरे भाई, मैं तुम्हारा अहसान जिन्दगी भर नहीं भूलूँगा।

शिवनाथ—अपनों के साथ क्या कोई अहसान करना है अहमद ! अरे यह तो पडौसी का फर्ज है। हम लोग बहुत देर से सलमा की दर्द-भरी आवाजें सुन रहे थे। तुम्हारी और बेगम की बातचीत भी दीवार के इस पार साफ सुनाई दे रही थी। मगर हम यह तय नही कर पा रहे थे कि खाना तुम तक कैसे पहुँचायें। तभी सुमन ने समझाया कि पापा बीच की दीवार तोड़ दो।

अहमद—सुमन ने ठीक ही कहा शिवनाथ। हमारे और तुम्हारे बीच यह दीवार ही तो है। खुदगरजी की बुनियाद पर खड़ी नफरत की दीवार जिसे हमने खुद नही बल्कि दूसरो ने खडा किया है।

सुमन—लीजिये अंकल, यह टिफिन।

शिवनाथ—ले लो अहमद। झिझको नहीं मेरे यार। हम हिन्दू-मुसलमान नही बल्कि एक अच्छे पडौसी है और हमारा धर्म है इन्सानियत। अच्छा, अब छोडो इन बातों को यह टिफिनदान पकड़ो और सलमा को खाना खिलाओ। दे दे बेटी सुमन।

सुमन—लीजिये अंकल। अरे, पापा ! टिफनदान तो मोकले से बड़ा है इसमें घुमता ही नही।

शिवनाथ—ठहर बेटा, दीवार की एक दो ईंटे और खिसकाये देता हूँ।

अहमद—नही शिवनाथ ! अब इस बाकी बची दीवार को मै ढाऊँगा अपने हाथों से।

सुमन—हाँ, अंकल, फिर तो बड़ा मजा आयेगा। दोनों मकान एक हो जायेगे और तब मुझे और सलमा को खेलने के लिये छत की दीवार नहीं फांदनी पड़ेगी।

शिवनाथ—अरे, अरे ! रुको अहमद ! बन्दूक की बट से दीवार क्यों तोड़ते हो ? बन्दूक बेकार हो जायेगी।

अहमद—बेकार हो जाने दो शिवनाथ। टूट जाने दो इसे। यही बन्दूक है जिसकी छाया तले नफरत के बीज बोये जाते हैं। न जाने इस बन्दूक ने

कितने घरों को तबाह और बरबाद किया होगा ? कितनी माँओं की गोद सूनी की होगी। कितने मासूम बच्चों की मुस्कराहट को आँसुओं में बदल दिया होगा, उन्हें दर-बदर भटकने के लिये मजबूर कर दिया होगा। मैं इस बन्दूक के टुकड़े-टुकड़े कर देना चाहता हूँ शिवनाथ, इसे नेस्तो-नाबूद कर देना चाहता हूँ। (दीवार पर बट की चोट और ईंटों के गिरने की आवाजें)

सुमन—बस, अंकल, बस ! अब तो मैं भी आसानी से निकल कर आ सकती हूँ। (टूटी दीवार से निकल कर) पापा, आप भी निकल आइये न।

शिवनाथ—अच्छा बेटा ! (टूटी दीवार से निकल कर) लो भाई, अहमद आज कूमल लगाकर तुम्हारे घर में आये हैं। (हँसी की आवाज)

अहमद—तुम्हारा नहीं अपना घर कहो शिवनाथ। अब दोनों घर हमारे अपने घर हैं। आ बेटी, सुमन ! मेरी गोद में आ। सलमा·····ओ सलमा, देख ! सुमन तेरे लिये खाना लाई है ?

सुमन—हाँ, सलमा, तेरी गुड़िया के लिये लड्डू भी लाई हूँ। चच्चीजान, सलमा को बुलाइये ना।

अहमद—अनवरी, जहेनसीब। शिवनाथ भी आये हैं।

शिवनाथ—आदाब ! भाभी जान ! अरे अहमद, क्या हुआ भाभी को ? ये रो क्यों रहीं हैं ?

अहमद—क्या बात है अनवरी, अरे सलमा को क्या हुआ ? तुम बोलती क्यों नहीं ? (अनवरी के सिसकने की आवाज दूर से पास आती जाती है अहमद लपककर अनवरी के पास पहुँचता है)

अहमद—(चीखकर) न·····य। मैं सलमा को भूख से नहीं मरने दूँगा, नहीं मरने दूँगा। सलमा, मेरी बच्ची·····देख, सुमन तेरे लिये लड्डू लाई है। इसके पापा तेरे लिये खाना लाये हैं। देख, आँखें तो खोल बेटी····· सलमा·····(अहमद के रोने की आवाज)

सुमन—चच्ची जान, सलमा को क्या हुआ ? अंकल ने सलमा को जमीन पर क्यों लिटा दिया ?

अनवरी—सुमन·····मेरी बच्ची·····सलमा हमारी गलत फहमियों का शिकार हो गई। (सुमन को सीने से चिपटा लेती है)

(अनवरी की सिसकियों में सुमन के रोने की आवाज मिल जाती है)

शिवनाथ—अहमद ! मेरे भाई ! रोने से अब कोई फायदा नहीं–कोशिश करें फिर कभी ऐसा न हो, फिर कहीं ऐसा न हो।

अहमद—हाँ शिवनाथ (शिवनाथ के हाथो में झूल जाता है)

(पृष्ठभूमि से गाने का आलाप)

फिर कभी ऐसा न हो·····फिर कहीं ऐसा न हो·····

जियो और जीने दो

○

पात्र

१– बूढा व्यक्ति	जिसका लडका सेना में भर्ता हो गया है।	आयु लगभग ६० वर्ष
२– मोहन	बूढ़े व्यक्ति का एक मात्र लड़का	आयु लगभग २१ वर्ष
३– डाकिया	चिट्ठी व तार बाँटने वाला	आयु लगभग २५ वर्ष
४– गाँव वाले–२		आयु लगभग ८० वर्ष व ४५ वर्ष
५– अफसर		आयु ५५ वर्ष

विशेष–– उपरोक्त पाँचों अभिनय एक ही कलाकार करेगा—वेशभूषा कुर्त्ता व पायजामा रहना चाहिये।

जियो और जीने दो

समाज और विद्यालयों में नाटक करने या कराने की सुविधाओं के अभाव में व्यक्तिगत अभिनय प्रतिभा मोनो एक्टिंग के रूप में प्राय. उभरती देखी गई है। संवादों के अभाव में तो यह प्रतिभा "माइम" के रूप में सामने आती है वैसे मोनों एक्टिंग ही ज्यादातर देखने को मिलते हैं। माइम इतना सरल भी नहीं है। सरल तो मोनो एक्टिंग भी नहीं फिर भी संवाद इस अभिनय का कुछ तो सरलीकरण कर ही देते हैं।

मोनो एक्टिंग के लिये आलेखों की कमी देखते हुये मैंने एक मोनो प्ले लिखने की कोशिश की है।

इसके माध्यम से मैंने परमाणु युद्ध से होने वाले विनाश की ओर इशारा किया है।

एकाकी—

जियो और जीने दो

व्यक्ति—हैं, यह आवाज कैसी (बाहर निकलना, ऊपर देखना) अरे ये खूनी दरिन्दे फिर मँडराने लगे आकाश में। तो क्या यह फिर बम गिरायेंगे। ओह, तब तो मन्दिरों में गूंजती शंख और घंटों की आवाज अनन्त में कहीं विलीन हो जायेगी, मस्जिदों में अजान दम तोड़ देगी, गुरुद्वारे का शबद कीर्तन जमीन की गहराइयों में समा जायेगा और गिरजेघर से आते प्रार्थनाओं के स्वर सन्नाटे में कहीं गुम हो जायेंगे। सब कुछ खत्म हो जायेगा···सब कुछ। और·····और तब छा जायेगा घुप्प अन्धेरा, श्मशान जैसी खामोशी चारों ओर। तब न मैं रहूँगा, न तू रहेगा और न वह (हँसी)।

तब कहाँ रहेंगे ये प्रान्त, कहाँ होंगी भाषायें, कहाँ रहेगा मजहब। बोलो किससे झगड़ोगे तब, किसके छुरा भोंकोगे, किसके घर में आग लगाओगे? जवाब दो·····

इसीलिये मैं तुमसे कहता हूँ अब भी समय है सँभल जाओ। मान लो मेरी बात मान लो। वरना ये हरे भरे खेत, ये कल कारखाने, ये सभ्यता और संस्कृति के प्रतीक राख के ढेर में बदल जायेंगे। बच्चों के मासूम, मुस्कुराते चेहरों पर मौत की स्याही छा जायेगी, दुल्हनों की माँग का सिन्दूर पुछ जायेगा, माताओं की गोद सूनी हो जायेगी और बुढ़ापे की लाठी टूटकर·····।

(लाठी टूटकर गिरना व सँभलना)

इस वक्त मुझे याद आ रही हैं वह घड़ियाँ, वह लम्हें जब मेरे बुढ़ापे की लाठी–मेरा मोहन, मेरा बेटा फौज में भर्ती होने की चिट्ठी लेकर आया था।

"बापू मैं जा रहा हूँ !"
"नही बेटे, नहीं, तू मेरे बुढ़ापे का सहारा है।"

मगर वह मेरे पैर छूकर, चला गया, मैं देखता रह गया। आशीर्वाद के लिये मेरे हाथ तक न उठ सके। मैं अकेला, बेसहारा–सा दरवाजे से लौट आया। मैने सीने पर पत्थर रख लिया। जैसे तैसे मन को समझा लिया।

समाचार मिलते रहे। तनख्वाह के रुपये भी आते रहे। जीवन चलता रहा। एक दिन मुझ चिट्ठी मिली। मेरा मोहन हवलदार बना दिया गया है। गाँव वालों ने बधाईयाँ दी, मिठाइयाँ बाँटी।

"चौधरी, मुबारक हो !"

"बधाइयाँ काका बधाइयाँ, सुना, मोहन हवलदार·····
हाँ, ठीक सुना, "लो मुँह मीठा करो।"

मैं भी खुश था मोहन की तरक्की पर। तभी लगा, मेरे मन के कोने से कोई कह रहा था 'क्यो खुश होता है आज। किसी दिन बुरी खबर भी आ सकती है।'

और वही हुआ जिसका मुझे डर था– एक दिन गाँव का डाकिया तार लेकर आया।

"चौधरी तुम्हारा तार !"
"तार ? किसने भेजा ? कहाँ से आया ? अरे बोल न।"
"चौधरी—मोहन भैया वीरता से लड़ते-लड़ते शहीद हो गये।"
"नहीं·····।"

(चीखकर गिर पड़ना, कुछ देर बाद उठते हुये)

मेरा मोहन चला गया। छीन लिया हिंसा के क्रूर हाथों ने मेरा सहारा– मेरा सर्वस्व। मैंने आँसुओं को आँखों में ही पी लिया। सब्र कर लिया मैंने जैसे-तैसे।

समय गुजरा, युद्ध बन्द हुआ। और एक दिन शहर के जलसे में बुलाकर मेरे बेटे की बहादुरी के लिये, उसके मरने के बाद एक तमगा मेरे सीने पर लटका कर मेरे सोये जज्बातों को फिर से जगा दिया। मुझे ऐसा लगा जैसे मेरे बेटे की गर्म लाश को मेरे सीने पर लटका दिया है। मैंने फौजी सलाम ठोका। साहब ने हाथ मिलाने के लिये बढ़ाया।

"कांग्रेचुलेशन चौधरी! तुम्हारा मोहन इतिहास में अमर हो गया।" मैं जैसे सोते से जागा।

युद्ध के कगार पर खड़े लोगों से पूछता हूँ मैं कि इन युद्धों से क्या मिलता हैं तुम्हें। इन्सानों के खून की नदियाँ बहाने से क्या हासिल होता है तुम्हें?

ऐ, युद्ध के दीवानों! मत भूलो तुम, ये विनाशकारी बम जो तुम बना रहे हो वह तुम्हारी बरबादी का भी कारण बन सकता है। क्योंकि बम के आँखें नहीं होती। वह देख देखकर वार नहीं करता, चुन चुन कर हत्यायें नहीं करता। उसकी चपेट में राम मरेगा तो रहीम भी मरेगा, जौन मरेगा तो बंतासिंह भी नहीं बचेगा। उसकी मार की रेंज में आ गया तो बचेगा बम बनाने वाला भी नहीं। इसलिये मैं कह सकता हूँ तुम अपनी तबाही को खुद दावत दे रहे हो, अपनी बरबादी का खुद कारण बन रहे हो। अपने पैरों में खुद कुल्हाड़ी मार रहे हो।

अरे नादानों! जब सब कुछ खत्म हो जायेगा तब तुम किस पर राज करोगे? इन्सानों की सड़ी-गली लाशों पर? टूटे-फूटे मकानों पर? वीरान बस्तियों पर?

मेरा मोहन तो मुझ से छिन गया—मगर मैं चाहता हूँ आपका मोहन आप से न बिछुड़े—आपका मोहन आप से न बिछुड़े। आपके बुढ़ापे का सहारा यूँ ही खेलता रहे। आपकी नजरों के सामने मुस्कराता रहे, आपका भविष्य।

इसलिये इन्सान से प्रेम करना सीखो, सहअस्तित्व के सिद्धान्त को पहचानो। खुद जियो और दूसरों को जीने का अधिकार दो। इन्सान की कीमत पहचानो। उसकी कद्र करना सीखो। ईश्वर की सत्ता में विश्वास करो, उससे डरो। तो बस एक भीख माँगता हूँ आपसे, एक वायदा कराना चाहता हूँ कि फिर कहीं कोई हिरोशिमा न बने। फिर कहीं विनाश का ताँडव न हो।

अरे, हमारी छोड़ो, अगर फौज के जवानों से भी पूछोगे तो वह भी यही कहेंगे कि "युद्ध नहीं होना चाहिये·····युद्ध नहीं होना चाहिये····· युद्ध नहीं होना चाहिये·····।"

भारत महान उर्फ आइना

●

पात्र

१– स्त्री	—	जो भारत माता की प्रतीक है	आयु लगभग ५५ वर्ष
२– रक्षक नं. १		भारतीय युवक	आयु लगभग २८ वर्ष
३– रक्षक नं. २		,,	आयु लगभग ३५ वर्ष
४– रक्षक नं. ३		,,	आयु लगभग ३६ वर्ष
५– रक्षक नं. ४		,,	आयु लगभग ३० वर्ष
६– अलका	—	युवक नं० २ की पत्नि	आयु लगभग २८ वर्ष
७– व्यक्ति	—	गैर भारतीय युवक	आयु लगभग २५ वर्ष
८– परदेशी	—	गैर भारतीय युवक	आयु लगभग २५ वर्ष

भारत महान उर्फ आइना

यह मेरे लम्बे नाटक का लघु रूप है जिसे दिल्ली परेड ग्राउन्ड में 'भारत महान' के नाम मे मंचित किया गया क्योंकि इससे भारतवासियों की महानता को विशेष रूप से दर्शाया गया है। जबकि मैंने इसे "आईना" नाम से अभिनय प्रशिक्षण शिविर मुरादाबाद में भावी कलाकारों से कराया क्योंकि इसमें प्रत्येक भारतवासी को अतीत के आइने में प्रतिबिम्बित करने का प्रयास किया है। बाद की कई प्रस्तुतियाँ 'आइना' शीर्षक से हुई। समस्त प्रस्तुतियों का लाभ इसे मिले अतः शुभ चिन्तकों ने 'उर्फ' बीच में लगाकर इस एकांकी का नाम लम्बा कर दिया।

इसका मूल विचार मेरे साथ घटी घटना पर आधारित है। एक यात्री आरक्षण हेतु मुझे रुपये देना चाहता है। मैं मना करता हूँ। वह ज़िद करता है अपने पक्ष को सही बनाते हुए देश विदेश के कई दृष्टान्त देता है। मैं भी प्रभावपूर्ण ढंग से अपने इन्कार को उदाहरण सहित रखता हूँ। बात बढ़ जाती है लोग इकट्ठा हो जाते हैं। कुछ मेरी कहते हैं कुछ उसकी। जीत सत्य की होती है और जन्म लेता है एक विचार कि ऐसे लोगों पर कुछ लिखा जाये। और यहीं से उपजता है एकांकी का कथानक।

नाटक मंचित करते समय स्टेज के मध्य में एक दम पीछे भारतवर्ष का नकशा बनाया जाये तो अच्छा रहेगा। उसके आगे खड़ी हो स्त्री जो गाने के दौरान नकशे में फैक्ट्री, बाँध, खेत, नहरें, ट्यूब बैल, रिग आदि के कट-रेखाचित्र जगह जगह टाँक रही है। अलका व रक्षक नं० २ की बातचीत उसी मंच पर आगे की तरफ स्पाट लाइट से अथवा पर्दा डालकर दिखाये। व्यक्ति व परदेसी को नकशे के पीछे से निकाले जो किसी ऊँचाई पर खड़े होकर संवाद बोले।

रक्षकों को कुर्त्ता पायजामा पहनाये जिससे प्रान्त, जाति या वर्ग का अहसास न हो और नाटक सभी में सौहार्द पैदा करें। व्यक्ति और परदेसी किसी भी वेश भूषा में दिखाये जा सकते हैं। ○

भारत महान उर्फ आइना

(एक स्त्री काम करते हुये नजर आती है और ४ रक्षक उसके चारों तरफ पहरे पर घूमते नजर आते हैं।) (पृष्ठभूमि से गीत)

गीत— नई अदा से, नई विधा से, हम अपने घर को सजा रहे हैं।
मिलें कही पे लगा रहे हैं, कहीं हरित-क्रान्ति ला रहे हैं॥
कहीं पे हम बाँधते महानद, कहीं पे नहरें बना रहे हैं।
समुद्र से, तो कहीं धरा से, ये तेल औ' गैस ला रहे हैं॥
सहारा विज्ञान का लिये हम, कदम प्रगति के बढ़ा रहे हैं।
इधर नियोजन भी कर रहे हैं, सुखों के साधन जुटा रहे हैं॥

रक्षक १—माँ। अभी तक काम कर रही हो। कुछ देर के लिये सो जाओ। विश्वास रखो, दक्षिण दिशा से कोई चिड़िया, पर भी नहीं मार सकती।

रक्षक २—हाँ, माँ। हम जाग रहे हैं। उत्तरी सीमायें पूरी तरह मेरे नियन्त्रण में हैं। तुम अब निश्चिन्त होकर थोड़ा विश्राम कर लो।

रक्षक ३—माँ। तुमने एक क्षण को भी आराम नहीं किया है। अब लेट रहो। हम पहरे पर मुस्तैद हैं।

रक्षक ४—ठीक ही तो है माँ। तुम तो बेकार में परेशान हो रही हो। पश्चिम की सरहदें मेरी मुट्ठी में हैं। अब कुछ देर चैन की सांस ले लो, और सो रहो।

स्त्री— मुझे नींद नहीं आती मेरे बेटों। मुझे हर वक्त इस घर की चिन्ता लगी रहती है, तुम्हारी फिक्र लगी रहती है, मेरे बच्चो। तुम्हारे लिये ही मेरी आंखों की नींद न जाने कहाँ उड़ गई है।

चारों रक्षक—हमें अपने फर्ज का अहसास है मां। हम पर विश्वास करो।

स्त्री— नहीं, तुम अभी नादान हो। कभी भी छोटी-छोटी बातों पर आपस में उलझ जाते हो। रूठकर अलग थलग होने की बातें सोचने लगते हो। एक दूसरे के खून के प्यासे हो जाते हो। भूल जाते हो उस समय तुम, कि तुम में खून का रिश्ता है। तुम भाई-भाई हो। एक ही मा के बेटे, एक ही माँ के जाये।

रक्षक १—हमें और शर्मिन्दा न करो मां।

रक्षक २—बीती बातें अब याद न दिलाओ मां।

रक्षक ३—माँ। हमें अपनी गलतियों पर अफसोस है।

रक्षक ४—अतीत को हम भूल जाना चाहते हैं, मां। हमें प्रायश्चित का एक अवसर और दे दो।

चारों— अब सो जाओ मां। निश्चिन्त होकर सो जाओ। अब हम जाग रहे हैं, तेरे प्रहरी, तेरी सीमाओं के रक्षक।

स्त्री— अच्छा ! तो कमर सीधी कर लेती हूँ। कुछ क्षणों के लिये।

(लोरी संगीत.....स्त्री आराम करने की मुद्रा में)

(प्रकाश सिमट कर रक्षक न० ४ पर पडता है).....

रक्षक ४—अरे, दूर यह पहछाईं किसकी दिख रही है। कौन है? हू कम्स देयर

व्यक्ति— शी.....धीरे बोलो, मैं हूँ तुम्हारा पडौसी–बन्दूक नीचे करो। अरे यार, मैं तुम्हारी हैल्प करने आया हूँ और तुम बन्दूक तान रहे हो ?

रक्षक ४—मगर बेवक्त..... ?

व्यक्ति —वाह। मदद करने के लिये वक्त थोड़े ही देखा जाता है तुम्हें परेशान देखा तो चला आया।

रक्षक ४—धन्यवाद। इस मदद के लिये। मगर इस सहानुभूति का कारण ?

व्यक्ति—इन्सानियत। लीजिये ये ब्रीफकेस पकड़िये। कबूल फरमाइये।

रक्षक ४—कितने गरीबनवाज हैं आप। आपका बहुत बहुत शुक्रिया। अरे, आपने ब्रीफकेस पीछे क्यों हटा लिया ?

व्यक्ति— ब्रीफकेस यूँ नहीं मिलेगा मेरे दोस्त। पहले हम कुछ बातचीत करेंगे। कुछ इकरार करेंगे।

रक्षक ४— हाँ हाँ। जरूर। जब तुम हमारे हितैषी हो तो तुम्हारी बात मानने में हमारी भलाई ही होगी। बोलो, मुझे क्या करना है ?

व्यक्ति— ऐसे नहीं, पास आओ, कान में सुनो, (रक्षक पास आकर सुनता है)

रक्षक ४—नहीं नहीं। मैं यह नहीं कर सकता। यह मुझ से नहीं होगा।

व्यक्ति —तुम बहुत जल्द उखड़ गये, मेरे दोस्त। शान्ति और धैर्य से काम लो–इतमिनान से अपने और अपने बच्चों के भविष्य के बारे में सोचो। अपने सुनहरे कल की तरफ देखो। इतनी बड़ी रकम तुम सात जनम में भी नहीं कमा पाओगे.....और फिर तुम्हारे परिवार की सुरक्षा की पूरी गारन्टी भी तो.....।

रक्षक ४—तो क्या, तुम मेरी बीबी और दो बच्चों को ही मेरा परिवार समझ रहे हो ? यह तुम्हारी नासमझी है अजनबी दोस्त। मेरा परिवार देखना है तो इस सीमा के अन्दर झांक कर देखो। वह सब मेरा परिवार है और हम चारों भाई चारों तरफ से इसकी रक्षा कर रहे हैं।

व्यक्ति— हूँ। उन तीनों को तुम अपना भाई कहते हो जिनके दीनो-ईमान जुदा हैं ? जिनका रहन-सहन अलग है। जिनकी भाषा, बोल-चाल, पहनावा सब भिन्न है ? उन्हें तुम.....।

रक्षक ४—चुप रहो ! तुम हमारे बारे में कुछ नहीं जानते। तुम यह भी नहीं जानते कि हमारी माँ एक है। एक खून है हमारी रगों में। यह हमारी मर्जी है कि हम क्या खाते हैं, क्या पहनते हैं, कैसे रहते हैं। बाहरी भिन्नता से कुछ नहीं होता, अजनबी दोस्त। अन्दर से हमारे मन एक हैं।

व्यक्ति— (क्रूर हँसी)
इस वक्त तुम भावनाओं में बह रहे हो। डोन्ट बी इमोशनल। असलियत को देखो। अच्छा चलो, थोड़ी देर के लिये मान ही

लेते हैं कि तुम सब भाई भाई हो। मगर मैं उन सबको नहीं, सिर्फ तुमको खुशहाल और मालामाल देखना चाहता हूं। मैं सिर्फ तुम्हारे लिये·····

रक्षक ४—अच्छा ! तो तुम हम भाइयों में फूट डलवाना चाहते हो ? मुझे मोहरा बनाकर तुम हमें आपस में लड़वाना चाहते हो ? तुम हमें बाँटकर हमारी शक्ति को कमजोर करना चाहते हो ? अब मैं समझ गया, तुम हमारी एकता के दुश्मन हो। तुम हमारी प्रगति से जलते हो, हमारी शान्ति और अहिंसा की नीति, तुम्हें फूटी आँख नहीं सुहाती ? तुम·····

व्यक्ति— बस···बस···बस। तुम मुझे गलत समझ रहे हो। अरे भई। मैं तुमसे कोई नई बात करने को थोड़े ही कह रहा हूं। मै तो बस यही कह रहा हूं कि जो तुम्हारे पूर्वज ने किया है वही करो। उसी के पद्चिन्हों पर चलो। तुम्हारा धर्म भी तो यही कहता है।

रक्षक ४—कौन पूर्वज ? कैसे पद्चिन्ह ?

व्यक्ति— अरे, भूल गये तक्षशिला नरेश राजा आम्भी को। सिकन्दर का साथ देकर वह मालामाल हो गया था। उसने दौलत ही नहीं राज्य भी·····

रक्षक ४— (चीखकर) न···य···मैं आम्भी नहीं बन सकता। मैं अपने देश के साथ गद्दारी नहीं कर सकता। जाओ ! लौट जाओ अजनबी।

(व्यक्ति भाग जाता है।)

स्त्री— (जागकर) क्या हुआ बेटा ? तू अचानक क्यों चीख पड़ा ?

तीनों रक्षक—कौन था यहाँ भैया ? किससे लौट जाने को कहा तूने ?

रक्षक ४— कोई नही, कोई भी नहीं। मैं स्वप्न देख रहा था···माँ···

स्त्री— तो क्या तू सो गया था ? क्या मेरी पश्चिमी सीमा के प्रहरी को नींद आ गयी थी ?

रक्षक ४—नहीं माँ ! मैं जाग रहा हूँ। मैंने खुली आँखों से एक भयंकर स्वप्न देखा था। अब वह खत्म हो गया माँ। हमेशा के लिये खत्म हो गया। तुम चिन्ता न करो माँ। मैं जाग रहा हूँ।

तीनों रक्षक—हाँ माँ ! हम जाग रहे हैं। तुम विश्राम करो।

स्त्री — तुम्हारा ही सहारा है मुझे। मेरे बच्चों, होशियार रहना। चारों तरफ खतरा ही खतरा है।

(स्त्री द्वारा सोने का उपक्रम।···किसी के आने का आभास)

रक्षक २— इस समय बेवक्त कौन हो सकता है ?

परदेसी —हैलो·····लो ब्रादर, अपना शेयर।

रक्षक २—कौन ? पहचान नहीं पा रहा हूँ ?

परदेसी —(धीमी हँसी) क्या मेरे अलावा और लोगों से भी टर्म्स बन गये हैं जो मुझे नहीं पहचान पाये ? लो, अब पहचानो। इस नकली दाढ़ी से चक्कर में पड़ गये थे न।

रक्षक २—पहचान कर भी नहीं पहचानना चाहता तुम्हें।

परदेसी —ऊँ·····शायद इसलिये कि मुझसे ज्यादा ऊँचा भाव लगाने वाले मिल गये हैं तुम्हें ?

रक्षक २—नहीं ! इसलिये कि मैं यह धंधा बन्द करना चाहता हूँ। किसी दिन राज खुल गया तो·····

परदेसी —राज कैसे खुलेगा। हाँ, अब अगर तुमने आनाकानी की तो·····

(क्रूर दबी हँसी)

रक्षक २—नहीं ! मुझ पर रहम करो। मुझे ब्लैकमेल म करो। मैं इस धंधे से अब तंग आ गया हूँ। लोगों को मुझ पर शक हो गया है। किसी दिन पकड़ा गया तो बीबी बच्चे तबाह हो जायेंगे।

परदेसी —बीबी बच्चों के लिये, यह थैली पकड़ो। पहले से चौगुनी रकम है।

रक्षक २—चौगुनी रकम। नहीं, नहीं, जितना काम मैं तुम्हारे लिये खतरा मोल लेकर करता हूं उसके लिये तुम पहले ही बहुत अधिक दे रहे हो।

परदेसी —बेशक, लेकिन इस बार जो काम तुम्हें करना है, उसका यह एडवांस है, फकत एडवांस·····

रक्षक २—सिर्फ एडवांस ? मतलब ?

परदेसी —घबराओ नहीं, तसल्ली रखो। आओ, मेरे करीब आओ। मैं तुम्हें अपने आका की मंशा समझाता हूँ। आओ, थोड़ा और करीब आओ। हाँ—अब सुनो (अस्पष्ट स्वर में बातचीत) समझे ?

रक्षक २—उंगली पकड़ कर पौचा न पकड़ो अब। मेरी मजबूरी का फायदा न उठाओ। मुझे माफ कर दो। मैं यह काम नही कर पाऊँगा।

परदेसी —अकेले करने के लिये कब कह रहा हूँ। अकेले करने का काम यह है भी नही। इसीलिये यह मोटी रकम सिर्फ एडवांस में है। बाकी की, काम हो जाने पर। हाँ, अगर तुम्हारे दूसरे मददगार पूरा हिसाब पहले ही चुकता करना चाहे तो वह भी हो सकता है।

रक्षक २—मैं तो मकड़ी के जाल में फँस ही गया हूं। मगर दूसरों को कहाँ ढूढूगा। मुझ जैसे गिरे हुये जमीर के इन्सान·····

परदेसी —बहुत मिलेंगे। बस जिक्र करने की देरी है। चाँदी की चमक में अच्छे अच्छो के ईमान डोल जाते है, मेरे दोस्त। फिर तुम्हारे देश के लोग तो लक्ष्मी के पुजारी है। दीर्घकाल से धन देवी के सामने समर्पण करते आये है।

रक्षक २—ठीक है, मै कोशिश करूँगा अजनबी दोस्त···मैं कोशिश करूँगा।

परदेसी —तो कामयाबी जरूर तुम्हारे कदम चूमेगी—अच्छा लो···अगले हफ्ते इसी दिन फिर आऊँगा। गौड ब्लेस यू, अच्छा बाई। (प्रस्थान)

रक्षक २—(स्वत.) इतनी बड़ी रकम, कही मैं पागल न हो जाऊँ। नही नहीं, मुझे ऐसा नहीं सोचना चाहिये। यह तो बड़ी रकम आने की शुरूआत है। इससे भी बड़ी थैलियाँ आ सकती है। तब क्या··· नही, मैं हिम्मत पैदा करूँगा अपने अन्दर। अरे जिन्दगी जीने का असली मजा तो अब आयेगा। बंगला, कार, फ्रीज, रंगीन

टी० वी०, वी० सी० आर० सब कुछ होगा मेरे पास, और होंगी रंगीन रातें, हसीन ख्वाब। लेकिन, इसके लिये कम से कम दो सहायक बनाने होंगे विश्वासपात्र, अपने लोग, जो दफ्तरों में ऊपर तक जाकर जानकारी ला सकें। अब तो अलका को सब कुछ बताना ही पड़ेगा वरना भण्डा फूट सकता है।

(रक्षक नं० २ अपने घर पत्नी अलका के पास)

(अलका के मकान के अन्दर का दृश्य) (कुत्ते के भौंकने का स्वर– 'जागते रहो' चौकीदार की आवाज)

रक्षक २—(दरवाजे पर दस्तक देकर) अलका। अलका। दरवाजा खोलो।

अलका —कौन है ? रात को चैन से सोने भी नहीं देते इनके यार दोस्त। जो भी आयेगा रात के अँधेरे में ही आयेगा।

रक्षक २—(दस्तक)

अलका —क्यों खुट खुट किये जा रहे हो। आ तो रही हूं। अब क्या उड़ कर आ जाऊँ।

रक्षक २—सोने के पंख लगाने आया हूं डार्लिंग। अब उड़ा फिरा करोगी।

अलका —(किवाड़ खोलने का आभास) आप ? इतनी रात गये ? अपनी जगह किसे खड़ा करके आये हो ?

रक्षक २—कोई नही ! जल्दी ही लौट जाऊँगा। माँ सो गई है और सुबह भी होने वाली है। लो यह थैली, संभाल कर रख दो।

अलका —क्या है इसमें ? (खोलकर) सौ सौ की गड्डियाँ ? कहाँ से उठा लाये इतनी रकम ? किसने दी है ये ?

रक्षक २—पड़ौसी ने।

अलका —पड़ौसी ने ? मगर क्यों ? तुम पर इतना मेहरबान कैसे हो गया वह ?

रक्षक २—कुछ खास काम करवाने हैं उसे।

अलका —मतलब ?

रक्षक २—मतलब सुबह लौटकर बताऊँगा। फिलहाल रख लो संभाल कर।

अलका —नहीं, जब तक तुम यह नहीं बताओगे कि इतने रुपये किस काम के लिये दिये हैं मैं इन्हें छूऊँगी भी नहीं।

रक्षक २—अच्छा, अच्छा, बताता हूं भाग वान, नाराज क्यों होती हो। भई ? कुछ बातें ऐसी होती हैं जिन्हें सबसे छिपाकर रखना पड़ता है।

अलका —पत्नी से भी ?

रक्षक २—हाँ, पत्नी से भी। अगर वह राज खुल जाये तो आजीवन कारावास हो सकता है। यहाँ तक कि फाँसी भी·····

अलका —अच्छा तो आप इस तरह के काम भी करने लगे हैं ?

रक्षक २—कभी कभी मजबूरी में करने पड़ जाते हैं अलका। सुनो (कान में कुछ कहता है)

अलका —अच्छा, तो आप विश्वासघात की इस सीमा तक गिर गये हैं। एक तरफ सुरक्षा और दूसरी तरफ गैरों से जोड़ तोड़ ?

रक्षक २—मगर अलका मैं जो कुछ कर रहा हूँ वह तुम्हारी खातिर कर रहा हूँ बच्चों की खातिर कर रहा हूँ।

अलका —मैंने और बच्चों ने कब आपसे कुछ मांगा है ? कब आपके सामने कोई फरमाइश रखी है ? मैंने तो कभी भी अपनी चादर के बाहर पैर भी नही फैलाये।

रक्षक २—ठीक है अलका। मगर यह भी कोई जिन्दगी है। उनको देखो जो हमारे बूते परे नम्बर दो की कमाई करके मौज मस्ती उड़ा रहे हैं और जिन्दगीं का मजा लूट रहे हैं।

अलका —नहीं चाहिये हमें एशोआराम की जिन्दगी। नहीं चाहिये मुझे ऐसी कमाई जिससे मेरा और मेरे बच्चों का स्वाभिमान मरता हो, सिर नीचा होता हो।

रक्षक २ —मगर अलका तुम्हारे प्रति मेरा भी तो कुछ फर्ज है। मैं तुम्हें दो जून की रोटी भी ....

अलका —यह ख्याल तुम्हें अब आया है, जब तुम जवानी के १५ साल निष्ठा, ईमानदारी और लगन को समर्पित कर चुके हो। अपनी सेवाओं के लिये पुरस्कार पा चुके हो। अब क्या उन्हें मिट्टी में मिला दोगे ? सारे किये कराये पर पानी फेर दोगे ?

रक्षक २ —अलका, बच्चे बड़े होते जा रहे हैं। उनकी पढ़ाई लिखाई, शादी विवाह के लिये.....···

अलका —उसकी चिन्ता मुझे हैं। घरेलू बातों को लेकर तुम राष्ट्र को दांव पर लगा दोगे, ऐसा तो मैं सोच भी नहीं सकती थी। कहाँ हवा हो गये तुम्हारे वह सिद्धान्त जिनकी तुम शान बघारते थे— "अलका ! मैं भगतसिंह और नेता जी सुभाष जैसा बनना चाहता हूँ। गाँधी और नेहरू मेरे आदर्श हैं। लालबहादुर शास्त्री की तरह सादा जीवन और उच्च विचार रखना चाहता हूँ," क्या वह सब दिखावा था, छलावा था.....क्या तुम मुझे अब तक बातों में बहलाते रहे हो, धोखा देते रहे हो.....बोलो.....।

रक्षक २—हाँ अलका—मैं तुम्हारे साथ विश्वासघात करता रहा हूँ तुमसे छिपाता रहा हूँ। मैं यह बातें तुम्हें अवश्य बताता अलका.....।

अलका —जब पानी सिर से ऊपर हो जाता ? तुम अपने वतन के साथ किसी दिन गद्दारी करोगे इसकी तो मैंने कल्पना भी न की थी। तुम अपनी माँ की पीठ में छुरा भी भोंक सकते हो यह तो मैंने सोचा भी न था। तुम्हारी पवित्र आत्मा ने यह सब कैसे स्वीकार कर लिया ? एक बार भी तुम्हारे जमीर ने धिक्कारा नहीं ? एक बार भी तुम्हारे हाथ ऐसे पैसे स्वीकारते समय कांपे नहीं। बोलो, जवाब दो ? बगलें क्यों झाँक रहे हो ? अब बोलते क्यों नहीं ?

रक्षक २—मेरे हाथ हर बार काँपे हैं, अलका। मेरी आत्मा ने हर बार मुझे कचोटा है मगर तुम्हारे और बच्चों के उदास निर्जीव चेहरों ने...

अलका —बार बार मेरा और बच्चों का नाम मत लो। अगर ये बच्चे तुम्हारे पतन का कारण हैं तो मैं अभी इनका गला घोंट दूँगी और मैं भी तुम्हारे रास्ते से हट जाऊँगी।

रक्षक २—नहीं अलका—ऐसा न करना।

अलका —मैं एक गद्दार की पत्नी कहलाना पसन्द नहीं कर सकती। अपने खानदान के माथे पर कलंक का टीका लगवाकर जिन्दा नहीं रह सकती।

रक्षक —अलका—मैंने ऐसा तो नहीं चाहा था।

अलका —तो लौटा दीजिए इस पाप की गठरी को, ठोकर मार दीजिए ऐसी कमाई को। मैं भूखी प्यासी रह लूंगी, बच्चों को भी बिना दूध के रख लूंगी। मगर मैं यह सहन नहीं कर सकती कि मेरे पति का नाम जयचन्द और मीरजाफर की लिस्ट में लिखा जाये। मैं आपको भामाशाह जैसा देशभक्त देखना चाहती हूँ—महाराणा प्रताप जैसा देशप्रेमी देखना चाहती हूँ। अभी भी समय है जाइये इस थैले को उसी पड़ोसी के मुँह पर दे मारिये—वरना इतिहास तुम्हें कभी माफ नही करेगा, लोग आप पर थूकेंगे—आपको नफरत से देखेंगे, आपको.....।

रक्षक २—बस, अलका बस.....और ज्यादा नहीं। मैं शर्मिन्दा हूं अपनी काली करतूतों पर.....मैं भटक गया था अलका। मैं अपनी राह भूल गया था—तुमने मेरी सोई आत्मा को झंझोड़ कर जगा दिया है.....मुझे मेरे कर्त्तव्य का भान करा दिया है—अब मैं किसी से नहीं डरता–मैं अब हर अंजाम कें लिये तैयार हूं अलका–मैं साँप के इस पिटारे को उसी को सौंप दूँगा—मुझे अब रोशनी मिल गई है.....मुझे सीधी सच्ची राह मिल गई है.....।

(दौड़ता हुआ चला जाता है)

(पहला वाला दृश्य तीनों रक्षक व भारत माता)

(बिजली की चमक व बादलों की गड़गड़ाहट)

स्त्री —(जानकर) अरे ! ये तेज हवायें क्यों चलने लगीं। और यह बादलों की गड़गड़ाहट, बिजली की चमक। क्या होने वाला है आज की रात। मेरी उत्तरी सीमाओं पर कोई नहीं ? कहाँ गया तुम्हारा भाई ?

रक्षक १ —यहीं कहीं होंगे माँ। सुबह होने वाली है आवश्यक कार्य से गये होंगे।

स्त्री —मैं कुछ दिनों से उखड़ा-उखड़ा सा देख रही हूँ उसे। लगता है जैसे वह हम लोगों से कुछ छिपाने की कोशिश कर रहा है।

रक्षक ३—रंग ढंग तो मुझे भी अच्छे नहीं लग रहे हैं भैया के।

रक्षक ४—वह देखो वह आ रहे हैं। लगता है पीछे हाथ में कुछ है।

स्त्री —मैं तो पहले ही जान गई थी कि इसके लक्षण बिगड़ने लगे हैं। न जाने कैसे कैसे लोगों में बैठने लगा है। आने दो आज, मैं इसकी अच्छी तरह से खबर लूँगी।

तीनों रक्षक—तुम फ्रिक न करो माँ। हम तीनों ही आज सारा फैसला कर देंगे।

रक्षक ४—तुम दोनों साइड से घूमकर पीछे से घेरो—जल्दी करो, पास आ गया है।

तीनों रक्षक—हैन्डस् अप।

रक्षक २—ऐं.....ओ.....

रक्षक ४—क्या है इस थैली में ?

रक्षक ३—बोलते क्यों नहीं, क्या है इसमें ?

(रक्षक नं० १ थैली हाथ में से छीनकर खोलता है)

रक्षक १—ओ···सौ सौ के नोटों की गड्डियाँ। किसने दी हैं ? बोलो किसने दी हैं ?

रक्षक २—सीमा पार वाले पड़ौसी ने·····

रक्षक ४—किसलिये दी हैं ? बोलिये इतनी बड़ी रकम किसलिये मिली है तुम्हें ?

स्त्री —यह क्या बतायेगा ? मैं बताती हूं। ये सौदेबाजी कर रहा है। मेरी खुशियों को गैरों के हाथ गिरवी रख देना चाहता है। मेरी गैरत और मेरी अस्मत को दूसरों की झोली में डाल देना चाहता

है। और यह सौ सौ के नोट इस काम का नजराना है। अपनों के साथ गद्दारी करने का इनाम है।

तीनों रक्षक—देश द्रोही·····विश्वासघाती·····

रक्षक २—हाँ, हाँ, मुझे मारो–मुझ पर थूको·····मैंने कर्म ही ऐसा किया है। मैं इसी लायक हूँ। मुझे घृणा की दृष्टि से देखो·····मैं गुनहगार हूं·····मैं राष्ट्रद्रोही हूं, गद्दार हूं मुझे फाँसी पर चढ़ादो·····

तीनों रक्षक—हाँ, हाँ, तू इसी लायक है। तुझे·····

स्त्री —नहीं, तुम इस पर हाथ नहीं उठाओगे। अपनी बन्दूकें नीचे करो (तीनों रक्षक बन्दूकें नीचे करते हैं) इसे सजा मैं दूँगी।

रक्षक २—हां माँ ! मैं आपका अपराधी हूं। मैंने वह नीच कर्म किया है जो कोई भी बेटा अपनी माँ के साथ नहीं कर सकता। मैं बहक गया था। मैं भ्रमित हो गया था माँ !

स्त्री —नहीं बेटे ! तू स्वार्थ में अन्धा हो गया था। सोनें चाँदी की चमक में तू अपनी जन्मभूमि को भूल गया था जहाँ तू पैदा हुआ है, अपनी माँ को भूल बैठा था जिसकी गोद में तू परवान चढ़ा है। अपने भाइयों को भूल बैठा था जिनकी सामूहिक शक्ति पर तेरा अस्तित्व टिका है। अरे नादान, वे तुझे मोहरा बनाकर हमारी एकता को छिन्न–भिन्न कर देना चाहते हैं। तुझे लालच के जाल में फांसकर आपस में लड़ाना चाहते हैं। प्रान्त, भाषा और मजहब के नाम पर तेरी संगठित शक्ति को बांटना चाहते हैं। अज्ञानी, तेरे पूर्वजों ने घास की रोटियां खाई, मगर आत्म सम्मान नहीं बिकने दिया। फांसी के तख्ते पर हँसते हँसते झूल गये, मगर अपने जमीर का सौदा नहीं किया। लाठी, गोलियां खाई, मगर मुल्क के साथ धोखा नहीं किया। तू उन्हीं की गौरवमयी सन्तान है तू उन्हीं देश भक्तों का वंशज है।

रक्षक २ —बस माँ····· बस, अब मेरी आँखें खुल गई हैं। मुझे अपने फर्ज की पहचान हो गई है। अब हम मजबूत जंजीर हैं। अभेद्य दीवार हैं, तेरी अजेय सीमायें है।

चारों रक्षक—हाँ माँ–अब हम एक हैं।

माँ — मेरे बच्चों·····मेरे जीवन·····मेरे प्राण।

(माँ प्रसन्न मुद्रा में और चारों रक्षक प्रतिशोधात्मक स्थिति में फ्रीज)

एक खून

●

पात्र

१– अमजद	एक खुदापरस्त इन्सान	आयु ६० वर्ष
२– नर्स	सरकारी अस्पताल की ईसाई सेविका	आयु २५ वर्ष
३– गोपालराम	अमज़द का मौहल्लेदार	आयु ५० वर्ष
४– शौकत हुसैन	युवा खुदाई खिदमतगार	आयु २५ वर्ष
५– व्यक्ति नं० १	खुदाई खिदमतगार के भेष में गुन्डा	आयु ३० वर्ष
६– व्यक्ति नं० २	खुदाई खिदमतगार के भेष में गुन्डा	आयु ६० वर्ष
७– डाक्टर	सरकारी अस्पताल का डी० एम० ओ०	आयु ५० वर्ष
८– इन्स्पेक्टर	पुलिस का दरोगा	आयु ४० वर्ष
९– जोज़फ़	पुलिस कांस्टेबिल	आयु ३५ वर्ष
१०– युसुफ़	अमज़द का गुमशुदा लड़का	आयु १२ वर्ष

एक खून

यह मेरा नया एकांकी हैं। मेरठ शहर में हाल में लगे कफ़्यूं के दौरान एक ऐसी घटना घटी जिसने जन्म दिया इस एकांकी को। एक आदमी पकड़ा जाता है जो लोगों की रुपये पैसे से मदद कर रहा है। उसकी निशान देही पर एक सरगना पकड़ा जाता है जो हिन्दुस्तान का नागरिक नहीं है। उसके पास से बरामद रिवाल्वर भी भारत का बना नहीं है। हाँ उसके पास करन्सी भारतीय है। यानि सौ सौ के नोटों की हजारों गड्डियाँ। उन गड्डियों को बाँटने वाले भारतीय हैं और लेने वाले……? क्या सम्बोधित करें उन्हें? कहाँ का नागरिक बतायें उन्हें? किसके प्रति वफादारी उनके नाम लिखें रजिस्टर में?

इन प्रश्नों ने झकझोरा मेरे मन को। क्योंकि कफ़्यूं मेरठ में कई बार लगा और शान्ति स्थापित हुई पर हर बार भंग हुई। समाचार पत्रों ने जो कुछ छापा उससे जो तथ्य हाथ लगे वह चौकाने वाले थे। उन्हीं तथ्यों को मैंने पिरोने को कोशिश की है "एक खून" एकांकी में।

इस नाटक का मंचन नहीं हुआ है अभी तक। स्टेज पर ३ बैड बिछे हैं। पीछे की दीवार में खिड़की। पहले बैड पर गोपालराम, तीसरे पर अमजद और बीच वाले पर शौकत लेटा है। बैड नं० १ व २ के बीच खून निकालने चढ़ाने का यंत्र लगा है। एक कुर्सी रखी है एक तरफ डाक्टर के लिये। बस इतना ही पर्याप्त है अस्पताल का कमरा दर्शाने के लिये।

व्यक्ति नं० १ व २ के नकली डाढ़ी ऐसे लगेगी जो उखड़ आयेगी आसानी से। वेशभूषा यथार्थवादी हो।

एक खून

(अस्पताल का एक वार्ड। एक तरफ पलंग पर बेहोश पड़ा अमजद कराह रहा है उसके सिर व हाथ में पट्टी बँधी हैं। दूसरी तरफ गोपालराम के पास में लेटे एक व्यक्ति का सीधे खून चढ़ाया जा रहा है)

अमजद — (होश में आकर) मैं·····मैं·····कहाँ हूँ ?

नर्स — आप जिला अस्पताल में हैं।

अमजद — मुझे यहाँ क्यों लाया गया है, ये सिर में पट्टियाँ क्यों बँधी हैं ?

नर्स — आपका सिर फट गया था—

अमजद — कैसे ? कैसे फट गया मेरा सर ?

नर्स — आप ज्यादा मत बोलिये, चुपचाप लेटे रहिये। डाक्टर ने बतियाने को मना किया है।

अमजद — बातचीत करने को मना कर दिया है डाक्टर ने !

नर्स — आपका ब्रेन पर चोट का असर हुआ है।

अमजद — क्या मैं गिर गया था नर्स ?

नर्स — नहीं—तुम्हारे सिर में किसी ने ईंटा मारा था।

अमजद — किसी ने ? किसने ? कौन मार सकता है मुझे। मेरा तो कोई भी दुश्मन नहीं—किसी से भी लड़ाई नहीं है मेरी। सभी मेरे भाई बिरादर हैं दोस्त अहबाब हैं। फिर मेरे सिर पर वार करने वाला कौन हो सकता है सिस्टर ?

नर्स — हमको नइ पता।

अमजद — (साइड में लेटे व्यक्ति को देखकर) ये कौन है ? इसके खून क्यों दिया जा रहा है ?

नर्स — ये भी आपके साथ ही इधर में भर्ती होने को आया। इसकी पीठ में छुरा मारा किसी ने।

अमजद — पीठ में छुरा मारा इसके, मेरे शहर में, नहीं ! ये कोई परदेसी होगा। मेरे शहर में कोई किसी को छुरा नहीं मारता, कोई किसी का गला नहीं काटता, कोई किसी के खून का प्यासा नहीं। सभी अच्छे लोग हैं। सब मिलकर रहते हैं, प्यार से रहते हैं। सिस्टर क्या नाम है इसका ?

नर्स — गोपाल राम ! राम गंज में रहता है।

अमजद — (आश्चर्य से) गोपाल राम ? ये तो अपना मुहल्लेदार है। देखूं तो। अरे हाँ हाँ, यह तो अपना पड़ौसी ही है। (लौटते हुए) सिस्टर मेरा मकान महबुल्ला गंज में है। हमारे पीछे की लेन का नाम राम गंज हो गया है। उसी में इसका चौथा मकान है। हमारी दुकानें भी पास पास ही हैं, सिस्टर आमने सामने। खाली वक्त में हम दोनों की खूब पटती है। साथ साथ चाय पीते हैं, पान खाते हैं और बीड़ी सिगरेट में दम लगाते हैं। अजीब बात है अस्पताल में भी दोनों पास-पास। सिस्टर, मेरा दोस्त बच जायेगा न ?

नर्स — हम उम्मीद तो करते हैं। हालत काफी सीरियस है। खून बहुत बह गया है। यह तो अच्छा हुआ कि यह लड़का मिल गया। दोनों का ब्लड ग्रुप एक जैसा है इसलिये ब्लड देने में देरी नहीं हुई।

अमजद — खुदा का शुक्र है। यह बरखुरदार कौन हैं ? किसी अच्छे घर के मालूम होते हैं ?

नर्स — यही नौजवान इसे अपनी गाड़ी में डालकर लाया था।

अमजद — जरूर, यह नौजवान हमारी बस्ती का बाशिन्दा होगा, प्यार और

मुहब्बत की बस्ती का। इन्सानों की जमात का मिम्बर। क्या नाम है इसका, सिस्टर ?

नर्स — (रिकार्ड देखकर) शौकत हुसैन वल्द नुसरत हुसैन—साकिन नई बस्ती।

अमजद — शौकत हुसैन का खून गोपाल राम के खून से मिलान खा गया ?

नर्स —क्यों, इसमें ताज्जुब की क्या बात है ? खून हर इन्सान में एक जैसा होता है। लोग जानते हैं कि जिस जिस ग्रुप का ब्लड हिन्दुओं में होता है वही वही मुसलमानों में भी होता है और वही सिखों और ईसाइयों में भी होता है, वही खून बंगाली का भी होता है वही मद्रासी, गुजराती, पंजाबी और कश्मीरी का भी होता है। खून के रिश्ते से सभी हिन्दुस्तानी भाई भाई हैं। मगर न जाने क्यों आये दिन झगड़े फसाद होते रहते हैं ?

अमजद — तो···तो क्या मेरी बस्ती में भी फसाद हुआ था और यह मेरा सर·····

नर्स — हाँ तुम्हारा सिर फसाद में·····

अमजद — और गोपाल राम के छुरा, बोलो, बोलो सिस्टर, क्या हम दोनों फसाद में जख्मी हुए हैं ?

नर्स — ओ गौड, ये हम क्या बोल गया ! सौरी, सौरी, अमजद–आई एम सो सौरी।

अमजद — आह सिस्टर·····(सिर पकड़कर नीचे को झुक जाता है)

नर्स — अमजद—अमजद—तुम सीधा लेट जाओ–डाक्टर आकर गुस्सा होयगा—लेट जाओ।

(सिस्टर अमजद को लिटाती है और इन्जैक्शन लगाती है)

नर्स — अब तुम आराम करो—ज्यादा सोचना का नई। डाक्टर के राउन्ड का टाइम हो रहा है। हमको भी तैयारी करना है हम जाता है।

(नर्स चली जाती है। अमजद लेटे २ सोच रहा है)

अमजद — (स्वयं से) फसाद–मेरे शहर में ? जहाँ प्यार ही प्यार बिखरा हुआ है। जहाँ से नफरत हमेशा हमेशा के लिये चली गई दूर बहुत दूर। जो परदेस गये वह ले गये अपने साथ उसे। जो रह गये यहाँ, वह यहीं रहना चाहते थे प्यार मुहब्बत से, हिलमिल कर, सच्चे दोस्तों की तरह, हमदर्द पड़ौसी की तरह। जो यकीन रखते थे खून के रिश्तों में, इन्सानी बिरादरी में। फिर–फिर ये कैसे हो गया ? सब कुछ कैसे उलट गया ?

ये किसका हाथ है और किसकी उँगलियों के निशाँ।
जो मेरे शहर को वीरान किये जाता है ॥

(दो व्यक्तियों का प्रवेश)

व्यक्ति १—कहिये जनाब, कैसे हैं ?

अमजद — ठीक हूं बस।

व्यक्ति २—शुक्र है खुदा का। कोशिश तो उनकी तुम्हारी जान लेने की थी मगर कामयाबी हासिल नहीं हुई। तुम्हारा बच्चा भी उठा ले गये हैं। मगर तुम फिक्र न करना, हम लोग तुम्हारी मदद के लिये हैं। हम उसे ढूंढ निकालेंगे। लो, फिलहाल यह ५०० रुपये रखो। बाद में जमात और इमदाद करेगी।

अमजद — आप साहेबान की तारीफ ?

व्यक्ति १—इस बारे में बाद में तफसील से बातचीत करेंगे जब आप ठीक हो जायेंगे। फिलहाल इतना जान लेना ही काफी होगा कि हम खुदाई खिदमतगार हैं और आपके भाई बिरादर हैं।

अमजद —आपका बहुत बहुत शुक्रिया। एक महरबानी और कीजिये, मेरे इस पड़ौसी की भी मदद कर दीजिये।

व्यक्ति १—हाँ हाँ, क्यों नहीं।

व्यक्ति २—कौन साहब हैं यह ?

अमजद — यह भी मेरी ही तरह मजबूर इन्सान है। फसाद का शिकार। इसको मदद की मुझसे भी ज्यादा जरूरत है।

व्यक्ति १—क्या नाम है जनाब का (रजिस्टर निकाल कर लिखने को तैयार)

अमजद — गोपाल राम साकिन रामगंज, मेरा पड़ौसी है।

व्यक्ति २—क्या–क्या, फिर से बोलना तो।

अमजद —रामगोपाल ! रामगंज में रहता है।

व्यक्ति २—माफ कीजिये, हम इनकी मदद नहीं कर सकते। ये रुपया सिर्फ अपने भाइयों की इमदाद के लिये है।

अमजद —ऐसा मत सोचिये। ये भी मुसीबत जदा है मेरी तरह। इसका तो सारा घर ही तबाह हो गया है।

व्यक्ति १—आप हमारी मजबूरी समझने की कोशिश कीजिये भाईजान। हम साँप को दूध·····

अमजद —चुप रहिये ! मदद नहीं करते तो मत कीजिये मगर खुदा के वास्ते गलत अलफाज मुँह से न निकालिये। ये मेरा दुख दर्द का साथी है। मेरी हर जरूरत पर काम आने वाला मेरा दोस्त है, मेरा हमदर्द पड़ौसी। आप तो आज अचानक कहाँ से मदद करने टपक पड़े। मगर यह तो मेरा २४ घंटों का मददगार है। पिछली तूफानी बरसात में मेरे घर की छत ढह जाने पर जो मदद गोपाल राम ने की उसे मैं जिन्दगी भर नहीं भूल सकता। अपनी जान जोखिम में डालकर मलवे में दबे मेरे बीबी बच्चों को निकालकर अपने घर तब तक रखा इसने जब तक मेरा नया मकान बन कर तैयार नहीं हो गया।

व्यक्ति १—ठीक है, हमें भी हमदर्दी है इनसे (अलग हटकर व्यक्ति २ से) इस बेवकूफ से इस वक्त बहस करने से कोई फायदा नहीं होगा। इस वक्त इसको समझाना बहुत मुश्किल है। बेहतर हो इसको भी कुछ दे दिवाकर छुट्टी करो। सुनो, ठीक हो जाने पर यह दवेन्दर की तरह जरखरीद गुलाम बन सकता है।

व्यक्ति २—तुम्हारा ख्याल दुरुस्त है। एक दवेन्दर इस बस्ती के लिये नाकाफी भी है। फिर वह ठहरा परदेसी, इस शहर के लोगों और गली कूँचों से नावाकिफ है। इस शहर का बाशिन्दा हमारा काम बाखूबी अंजाम दे सकता है। किसी से मिलने और कहीं आने जाने पर कोई आसानी से इस पर शक भी नहीं कर पायेगा।

(शौकत खून देने के बाद धीरे धीरे उठकर बैठता है। दोनों व्यक्ति अमजद के पास जाकर)

व्यक्ति १—आप ने बजा फरमाया था भाईजान—गोपाल राम को इमदाद की वाकई आप से ज्यादा जरूरत है। हमने तन्हाई में सारे हालात पर गौर करके यह तय पाया कि ५००) गोपाल राम को भी बतौर फौरी इमदाद दे दिये जायें (पास बैठे शौकत से) आप ही इनकी देखभाल कर रहे हैं ?

शौकत —जी हाँ, फिलहाल ऐसा ही समझिये।

व्यक्ति १—तो क्या इनका कोई रिश्तेदार या खानदानी नहीं हैं।

शौकत —जी नहीं ! मैंने इन्हें अपना खून दिया है और खून के रिश्ते से मैं इनका भाई हुआ। इन्सानी मुहब्बत के जज्बे ने हमें एक दूसरे के करीब ला खड़ा किया है। यह किसी नासमझ वहशी के कातिलाना हमले का शिकार बन, सड़क की एक बाजू में पड़े कराह रहे थे। कातिल इन्हें मरा हुआ समझकर छोड़, भाग गये थे। मैं कपर्यू पास पर शहर में घूम रहा था। मैंने देखा अभी साँस बाकी थी। मैं गाड़ी में डालकर यहाँ अस्पताल ले आया इनके घरवालों और रिश्तेदारों को तो अभी खबर भी नहीं मिल पाई होगी।

व्यक्ति २—बहरहाल आप यह रकम कुबूल फरमायें और होश आने पर इनको या इनके रिश्तेदार को हमारी तरफ से दे दें और इनको हमारी तरफ से यह भी जता दें कि अगर, ये हमसे मिलकर चलेगा और हमारा काम करेगा तो ऐश की जिन्दगी बितायेगा।

व्यक्ति १—(रुपये गिनकर देते हुए) लीजिये ये ५०० रुपये और अपना नाम व पता बताइयेगा।

शौकत —जी, शौकत हुसैन।

व्यक्ति १—ऐं, क्या कहा, फिर से कहना।

शौकत —जी, शौकत हुसैन।

व्यक्ति २—और तुमने·····तुमने अपना खून दिया? इसे बचाने के लिये अपना खून दिया।

शौकत —जी हाँ—इसमें ताज्जुब की क्या बात है। मेरा खून इसके खून से मिलान खा गया इसलिये एक इन्सान को दोबारा जिन्दगी देने के ख्याल से·····

व्यक्ति २—(बात काटकर) इन्सान? तुम इसे इन्सान कहते हो? ये शैतान है, हमारा और हमारी सारी कौम का·····

शौकत —(बात काटकर) आपका नजरिया एकतरफा और गलत है। कभी आपने अपने गिरहवान में झाँककर देखा है? बुजुर्गवार दूसरे की आँख का तिनका नहीं अपनी आँख का शहतीर देखिये। क्यों शक और शुबाह को जगह देते हो। दूसरे मुल्क से आये अपने रिश्तेदार की साजिश में क्यों शामिल होते हो, उसकी हरकतों का पर्दाफाश क्यों नहीं करते? वीसा खत्म हो जाने के बाद भी क्यों छिपाये रखते हो मस्जिदों और तहखानों में—कानून के हवाले क्यों नहीं करते, उन्हें?

व्यक्ति १—हमारा जवाब सुनने से पहले तुम ही बताओ बरखुरदार क्या तुम अपने चचा, ताया या बहनोई को जेल में सड़ता हुआ देख सकते हो?

शौकत —बेशक बुजुर्गवार, मैं जहाँ रह रहा हूं, जहाँ की आबोहवा में साँस ले रहा हूं, उसके खिलाफ साजिश करने वाले को मैं माफ नहीं कर सकता। वह मेरा रिश्तेदार नहीं दुश्मन है। वह हमें तबाह और बरबाद करने आया है। बुजुर्गवार! एक झगड़ा कराने पर इनकी

तो तरक्की हो जाती है मगर आम आदमी को क्या मिलता है ? जो कुछ हमारे पास है हम उसे भी खो बैठते हैं, हमारी तनज्जुली हो जाती है। हमारा कारोबार, हमारा बिजनेस सब ठप्प हो जाता है। मगर, आपको इससे क्या ? मुर्दा दोजख में जाये या जहन्नुम में, आपका हलुआ माँडा चलना चाहिए।

व्यक्ति २—हद से आगे बढ़ने की कोशिश मत करो बरखुरदार। अगर ऐसा ही भलाई का जज्बा है तो कम से कम आदमी देखकर तो मदद किया करो।

शौकत —आप तो मेरे से बड़े हैं, तजुर्बे में भी ज्यादा हैं, आप बतायें, कौन सी किताब के हवाले से आप ऐसा कह रहे हैं। किस पीर पैगम्बर ने ऐसा कहा है कि जात बिरादरी देखकर मदद करो। खुदा के सभी बन्दे एक बराबर हैं जनाब। जरूरतमन्द, जरूरतमन्द है फिर वो चाहे किसी भी मजहब या जात का हो, इमदाद का हकदार है।

व्यक्ति २—अच्छा अच्छा, अपना फलसफा अपने पास रखो, वक्त आने पर सब समझ जाओगे–अच्छा हम फिर आयेंगे––होश आने पर इसे हमारे बारे में जरूर बताइयेगा। लीजिये २०० रु० के आगे अपने दस्तखत कर दीजिये।

अमजद —इसे इतनी कम रकम क्यों ? इसे भी मेरी तरह···

व्यक्ति १—(बात काटकर) वह नहीं हो सकता। तुम तो हमारे भाई बिरादर हो। ऊपर से ऐसा ही फरमान है।

अमजद ––अगर देखें तो यह भी आपका भाई है। एक सच्चा इन्सान ही नहीं बल्कि फरिश्ता है। हमारे हर आड़े वक्त पर यह काम आया है। यही गोपालराम है जिसने किसी की परवाह किये बगैर अपनी जान हथेली पर रखकर हमें बचाया, हफ्तों अपने घर में छिपाकर रखा।

व्यक्ति २—(व्यक्ति नं० १ को अलग ले जाकर) कहाँ फँस गये–यहाँ अपनी दाल गलने वाली नहीं है। इस वक्त इसकी बात मान लेने में ही हमारी बेहतरी है। आज हम इनकी मानेंगे तो कल यह हमारी मानेंगे।

व्यक्ति १—ठीक है ! हमने आपकी बात को अच्छी तरह समझने के बाद यह फैसला किया है कि आपकी बात ही दुरुस्त है। इसकी जरूरत को देखते हुये·····

(किसी के करीब आते जूतों की आवाज) कोई आ रहा है, शायद डाक्टर हैं)

व्यक्ति २—भागो, जल्दी करो, उधर से नहीं खिड़की से कूदो।

शौकत —अरे, जनाब उधर खिड़की से क्यों, दरवाजे से·····

अमजद —चोर·····चोर·····पकड़ो·····आह (पलंग पर गिर पड़ता है)

(डाक्टर तेजी से मंच पर आता है)

डाक्टर —कौन है, किधर गया।

शौकत —वह भागे जा रहे हैं—वह देखिये अस्पताल की बाउंड्री वाल पर चढ़ रहे हैं।

डाक्टर —आप लोग होशियार रहें और घबरायें नहीं। मैं पुलिस को खबर करता हूँ।

(डाक्टर तेजी से बाहर निकल जाता है)

अमजद —ये लोग डाक्टर के आने पर खिड़की से क्यों कूद गये ? कौन थे ये शौकत ?

शौकत —मुझे लगता है ये उन लोगों के एजेन्ट हैं जो शहर में दंगा फसाद करवा रहे हैं। ये पैसे बाँट बाँट कर लोगों का ईमान खरीद रहे हैं। उन्हें गुमराह करके अपने हिसाब से इस्तेमाल कर रहे हैं।

अमजद —जरूर ऐसा ही है वरना इस तरह डर कर भागने की क्या जरूरत थी ?

शौकत —साफ जाहिर है। जब तुमने गोपाल राम की मदद करने को कहा था तो वह कितना चौंके थे और मेरे खून देने की बात सुनकर उन्होंने कैसे नाक भौं सुकोड़ी थी।

अमजद —और अलग जाकर गुपचुप करने से अब लगता है कोई साजिश कर रहे थे। अगर वाकई वह मुसीबत जदाओं के मसीहा बन कर आये थे तो सबको एक निगाह से देखते। मुझे ५०० और गोपाल राम को २०० क्यों देते ?

शौकत —जनाब यह सब सियासत है इनकी बला से कोई मरे या जिये बस इनकी जेबें गरम होती रहनी चाहिये। न इनकी कोई बिरादरी, न इनका कोई मजहब न कोई मुल्क।

अमजद —बरखुरदार, माफ करना। ये सब नये खून की करामात है, नई रोशनी की देन है, नई तहजीब का असर है। हमें देखो, पुराने ख्यालात के आदमी हैं, नमाजी और मजहब के पक्के। खुदा के खौफ से डरने वाले। कभी देखे थे ये झगड़े फसाद, खून खराबा और आगजनी के खौफनाक नज्जारे, कभी सुना था कि कभी किसी ने मन्दिर और मस्जिद को नापाक करना तो दूर हाथ भी लगाया हो। सब मिल जुल कर प्यार मुहब्बत से रहते थे—एक दूसरे के दुख सुख में शामिल होते थे, तीज त्यौहारों में शिरकत करते थे।

शौकत —शायद आप ठीक हैं। हम बहुत खुदगर्ज हो गये हैं। पैसा ही हमारा धर्म और ईमान बन गया है। नोटों की गड्डियाँ देखकर हम सब कुछ भूल जाते हैं अपना देश, अपना समाज, अपना मजहब, जात बिरादरी यहाँ तक कि पैसे के लिये अपने सगे भाई का गला काटने को तैयार हो जाते हैं।

(गोपालराम को धीरे धीरे होश आता है। वह बुदबुदाता है)

गोपाल —आह—·· आह·····

अमजद —देखो, देखो, गोपालराम को होश आ रहा है।

शौकत —(आवाज देकर) सिस्टर—गोपालराम कुछ बोलने की कोशिश कर रहा है।

(सिस्टर आती है और परीक्षण करती है)

नर्स —गोपालराम, कैसा लग रहा है तुमको ?

गोपाल —सिस·····टर·····मैं·····मैं

शौकत —देखो अमजद गोपालराम ने आँखे खोलीं। तुम्हारी तरफ देख रहा है।

अमजद —गोपाल, देखो गोपाल—मैं·····मैं अमजद तुम्हारा पड़ौसी। देखो सिस्टर, गोपालराम ने मुझे पहचान लिया। वो सिर हिला रहा है। गोपालराम घबराओ नहीं जल्दी ठीक हो जाओगे मेरे दोस्त। फिर हम दोनों·····अरे इसने मुंह क्यों फेर लिया मेरी तरफ से और चेहरे पर नफरत ? तो क्या मुझे भी इसने गैर समझ लिया ? क्या यह मुझ पर भी शक करने लगा ? नहीं, नहीं, मैं तो इनका वही पुराना पड़ौसी हूँ—साथ साथ उठने बैठने वाला, साथ साथ खाने पीने वाला अमजद, हम प्याला, हम निवाला।

नर्स —उसको गफलत हो रही है। आराम करने दो। चलो अपने बैड पर। डोन्ट डिस्टर्ब।

डाक्टर —(आते हुये आवाज देकर) नर्स !

नर्स —यस, डाक्टर !

डाक्टर —कौन जोर-जोर से बोल रहा है ?

नर्स —पेशेन्ट नम्बर पाँच बहुत इमोशनल हो रहा है।

डाक्टर —(गोपाल राम को चेकअप करते हुये) क्या बात है अमजद ! तुम जब से आये हो न खुद आराम कर रहे हो न दूसरों को चैन से लेटने दे रहे हो।

अमजद —डाक्टर साहब, आप ही बताइये, कुछ गुन्डों की शैतानियत को लेकर क्या पूरी जमात को बदनाम कर देना चाहिये ? चन्द सिरफिरों की वहशियाना हरकतों की सजा क्या पूरी कौम को भुगतनी चाहिये ?

डाक्टर —नहीं, नहीं, ये तो बेइन्साफी है। हर आदमी को उसके ही किये का फल मिलता है।

अमजद —ये बात मेरे बचपन के दोस्त गोपालराम को समझाइये—ये मुझसे नाराज है, मुझसे नफरत करने लगा है, किसी के किये की सजा मुझे क्यों दे रहा है? डाक्टर····· इसे·····इसे·····

डाक्टर —तुम को गलत फहमी हो रही है अमजद—इसकी हालत ठीक नहीं है, बार बार बेहोशी हो जा रही है। अभी ये सैन्स में नहीं है। तुम भी ज्यादा मत बोलो खून छलक आया है बैन्डेज पर। नर्स इन्हें अब बैड पर से न उठने देना।

(अमजद को नर्स लिटाती है और तभी पुलिस इंस्पेक्टर दो अपराधियों के साथ आता है)

इंस्पेक्टर—हलो डाक्टर।

डाक्टर —हलो इंस्पेक्टर चौहान। कहिये, आज कोई और नया शगूफ़ा ले आये क्या?

इंस्पेक्टर—और हमारे पास काम ही क्या है डाक्टर। इनसे मिलिये ये अस्पताल की दीवार फाँद कर भागते हुए पकड़े गये हैं। इनके पास से ८५ हजार के नोट और २ रिवाल्वर मिले हैं। तहकीकात करने पर इन्होंने कबूल किया है कि·····

अमजद— (बात काटकर·····) ये ही हैं वह लोग, इंस्पेक्टर साहब, जो मुझे अभी कुछ देर पहले ५०० रु० के नोट दे गये हैं और गोपालराम को भी मेरे बहुत कहने पर इन्होंने ही ५०० रु० दिये हैं। ये ही हैं वह बदमाश जो इस शौकत को मजहब की दुहाई देकर गुमराह करने की कोशिश कर रहे थे।

इंस्पेक्टर—तुम इन्हें ठीक से पहचानते हो। ये ही वे लोग हैं?

अमजद —जी, ये ही वो·····लेकिन अभी तो इनके दाढ़ी थी।

इंस्पेक्टर—वह नकली थी (जेब से निकालकर) ये रही।

डाक्टर —यह क्या पहेली है इंस्पेक्टर चौहान।

इंस्पेक्टर—ये नामी गुन्डे हैं डाक्टर। पैसा लेकर किसी के लिये भी कोई काम करने वाले पेशेवर अपराधी। ये बेरोजगार नौजवानों को रुपयों और हथियारों का लालच देकर मजहबी झगड़े करा रहे हैं। गरीब और मुफलिसों को पैसा बाँट बाँट कर उन्हें अपनी मरजी से इस्तेमाल कर रहे हैं। हमें इनकी तालाश थी डाक्टर।

डाक्टर —किस कौम के हैं ये लोग ?

इंस्पेक्टर—इनका कोई धर्म नहीं होता। बस पैसा, जैसा भी मिले जहाँ से भी मिले। यह हिन्दू है मगर इसने ही पैसे की खातिर मन्दिर में नाजायज़ वस्तु डाली थी—वह जनाब मुसलमान है मगर मस्जिद को नापाक करते समय खुदा को रुपयों के साथ अपने सन्दूक में बन्द करके आते हैं। इनमें सिख भी हैं मगर उन्होंने अपनी दाढ़ी मूछें साफ करा रखी हैं, केश कटवा दिये हैं सिर्फ रुपयों की खातिर।

अमजद —इन्हें हिन्दू, मुसलमान और सिख ईसाई कहना मजहब की तौहीन करना है। दरोगा जी ये सिर्फ गुन्डे हैं, गुन्डे।

डाक्टर —करैक्ट···मगर देखने में तो ये शरीफजादे नजर आते हैं इंस्पेक्टर।

इंस्पेक्टर—यू आर राइट डाक्टर ! लेकिन आप इन्हें शक्ल से नहीं पहचान सकते। बहुत भोले नजर आते हैं यह लोग, मगर इनके कारनामे सुनोगे तो दाँतों तले अँगुली दबा जाओगे (व्यक्ति १ से) क्या नाम है तेरा ? असली नाम बताना वर्ना साले मार मार के भुस भर दूँगा—बोल, अबे मुँह से क्यों नहीं फूटता (एक थप्पड़ मारता है)

व्यक्ति १—जी, मेरा नाम गोवरेन्दु है।

इंस्पेक्टर—सुना डाक्टर ! क्या काम लिया जाता है तुमसे ?

व्यक्ति १—जी, हम हिन्दू भाइयों में घुलमिल जाते हैं, दोस्ती दिखाते हैं, हमदर्दी जताते हैं, पैसा देते हैं, वक्त मुसीबत पर काम आते हैं और उनके विश्वासपात्र बन जाते हैं फिर जो चाहें हम उनसे करवाते रहते हैं।

इंस्पेक्टर—क्या मिलता है इसके बदले तुम्हें ?

व्यक्ति १—जी, चार हजार रुपये और ५०० रुपये खर्चे पानी के नाम पर।

इंस्पेक्टर—और क्या काम करते हो ?

व्यक्ति १—जी, मन्दिरों में पूजा के बहाने जाते हैं, पुजारी के साथ उठते बैठते हैं जो कुछ वह सेवन करने वाला है उसे सप्लाई करते हैं फिर मन्दिर में जो चाहे करते हैं।

इंस्पेक्टर—नाजायज वस्तु तुमने ही डाली है न पिछवाड़े वाले मन्दिर में ?

व्यक्ति १—जी, डालना ही पड़ता है साहब।

इंस्पेक्टर—(व्यक्ति नं० २ से) तेरा नाम क्या है बे ?

व्यक्ति २—गीतुल चमन।

इंस्पेक्टर—तुम किस मर्ज की दवा है

व्यक्ति २—जी, मैं भी वही काम करता हूँ जो गोवरेन्दु करता है। ये हिन्दुओं को बरगलाता है, मैं मुसलमानों को उकसाता हूँ, ये भगवान के नाम पर लोगों को बहकाता है, मैं अल्लाह के नाम पर झगड़े फसाद कराता हूँ।

इंस्पेक्टर—मस्जिद में पड़ी गन्दगी को लेकर जो हंगामा हुआ क्या वह तुम्हारी हरकत थी या गोवरेन्दु की ?

व्यक्ति २—जी, वह काम मुझे ही सौंपा गया था इसलिये कि मैं मुसलमान हूँ और मुझे मस्जिद में जाने का पूरा पूरा हक है।

इंस्पेक्टर—तुम न मुसलमान हो और न ये हिन्दू। बल्कि तुम गुन्डे हो और गुन्डों का कोई मजहब नहीं होता, गुन्डों का कोई दीनो-ईमान नहीं होता। वह रुपयों से खरीदा हुआ गुलाम होता है, दूसरों की हाथ की कठपुतली, अपने भाइयों का जानी दुश्मन।

(एक सिपाही का एक १२ साल के लड़के के साथ प्रवेश)

सिपाही—(सलाम ठोककर) हुजूर। इस गिरोह के और भी बदमाश पकड़े गये—आपको कोतवाली बुलाया है। उनकी निशान देही पर यह लड़का भी इसी कालोनी से बरामद किया है।

इंस्पेक्टर—क्या नाम है इसका ?

सिपाही —यूसुफ वल्द अमजद साकिन महबुल्ला गंज ।

अमजद —(चौंककर) युसुफ मेरे बेटे·····

यूसुफ —अब्बाजान..... ।

इंस्पेक्टर—ये आपका लड़का है ?

अमजद —जी हाँ, इंस्पेक्टर साहब ! पास के कब्रिस्तान में खेल रहा था—झगड़े के बाद बहुत ढूँढा, मिला ही नहीं ।

इंस्पेक्टर—अपने आप को मुसलमान कहने वाले इन गुन्डों से बरामद हुआ है । अब आप न घबरायें—हम इसे भी कोतवाली ले जा रहे हैं । पूछताछ के बाद आपके पास पहुँचा देंगे । अच्छा डाक्टर, आप इन दोनों का खास ख्याल रखें—इन्हें बतौर गवाह पेश करना होगा ।

डाक्टर —ओ के इंस्पेक्टर (डाक्टर चला जाता है)

अमजद —इंस्पेक्टर साहब, ये लीजिये इनके दिये ५०० रुपये । नहीं चाहिये हमें ऐसी मदद ।

शौकत —और गोपालराम को दी गई इमदाद के ये ५०० रु० मैं भी आपको लौटा रहा हूँ । ऐसी इमदाद को दूर से सलाम ।

इंस्पेक्टर—(सिपाही से) जोजफ, ये रुपये भी ले चलो कोतवाली । और इन दोनों के गले में तख्ती डालकर ले चलो ।

(सिपाही व्यक्ति नं० १ के गले में हिन्दी में व व्यक्ति नं० २ के गले में उर्दू में लिखी तख्ती डालता है जिस पर लिखा है—"हम कौम के दुश्मन हैं, जूते मारो"

अमजद —सिपाही जरा हम भी देखें—क्या लिखा है तख्ती पर ।

(सिपाही दोनों व्यक्तियों का मुँह अमजद व शौकत की तरफ घुमा देते हैं)

शौकत —वाह क्या खूब "हम कौम के दुश्मन हैं, हमें जूते मारो", लो बिस्मिल्ला करता हूँ (शौकत जूता मारता है ।)

अमजद —और ये भी ले। (अमजद भी जूता मारता है)

गोपालराम—अम···जद···

शौकत —बुजुर्गवार इन्हें होश आ रहा है। आपको पुकार रहे हैं।

अमजद —सिस्टर·····गोपालराम को होश आ रहा है वह कुछ बोलने की कोशिश कर रहा है।

(नर्स व डाक्टर दौड़कर आते हैं व परीक्षण करते हैं)

अमजद —गोपालराम ! गोपालराम ! अब कैसा लग रहा है ?

गोपालराम–अमजद···मुझे···माफ करना—मेरे दोस्त। मेरे दिमाग में····· तेरे लिये—गलत बातें घर कर गई थीं। मैं तुझ पर शक करने लगा था। मैं अब·····हल्का मन लेकर जा रहा हूँ दोस्त। मेरी बात·····लोगों तक पहुँचा देना। सब···मिलकर···रहें। आपस में·····लड़वाने वाले गुन्डों को ढूँढ ढूंढकर कानून के हवाले करें। हमें···यहीं···रहना है। यहीं···मरना है। ये ही हमारा वतन है। ये ही हिन्दु·····स्तान (दम तोड़ देता है)

अमजद —(चीखकर) गो पा ऽऽऽल····

शौकत —अफसोस–सद अफसोस ! मैं एक इन्सान को बचा न सका—मेरा खून बेकार गया·····गोपाल भी आखिर वहशी दरिन्दों की हविस का शिकार हो ही गया— (सब सिर झुका लेते हैं) डाक्टर चादर से मुँह ढक देता है।

(पृष्ठ भूमि से दर्दीला संगीत उभरता है साथ में अलाप में गीत के स्वर उभरते हैं।

"फिर कहीं ऐसा न हो·····फिर कभी ऐसा न हो।"

हिन्दी विभाग
राष्ट्रीय पुस्तकालय
कलकत्ता